

आचार्य पुष्पकुन्द : द्रव्यावली

डॉ० कमलचन्द सोगानी
(मेवानिवृत्त प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र)
परामर्शदाता
अपभ्रंश साहित्य अकादमी
जयपुर

प्रकाशक

जैनविद्या संस्थान

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी
राजरथान

☐ प्रकाशक
जैनविद्या संस्थान
दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी
श्रीमहावीरजी (राज) 322220

☐ प्राप्ति स्थान
1 जैनविद्या संस्थान, श्रीमहावीरजी
2 अपभ्रंश साहित्य अकादमी
भट्टारकजी की नशिया
सवाई रामसिंह रोड, जयपुर-302004

☐ प्रथम बार, 1000, 1989

☐ मूल्य 15 00

☐ मुद्रक
पॉपुलर प्रिन्टर्स
मोती डूंगरी रोड,
फतेह टीबा मार्ग, जयपुर

प्रकाशकीय

जैन-जगत् मे सर्वाधिक विश्रुत आचार्य कुन्दकुन्द के द्विसहस्राब्दी वर्ष के अन्तर्गत जैनविद्या सम्स्थान की ओर से आचार्यश्री से सम्बन्धित यह द्वितीय प्रकाशन है ।

भगवान् महावीर के सिद्धान्तो को ग्रथ रूप मे निबद्ध कर उन्हें स्थायित्व प्रदान कर आचार्य कुन्दकुन्द ने दिगम्बर जैन साहित्य और आम्नाय को तो सुरक्षित रखा ही, साथ ही दार्शनिक-जगत् मे भी अमूल्य योगदान दिया ।

आचार्य कुन्दकुन्द की उपलब्ध सभी रचनाएँ तात्त्विक चिन्तन से श्रोत-प्रोत हैं । आचार्यश्री प्रथम जैन दार्शनिक हैं जिन्होंने अपने ग्रन्थो मे द्रव्य की अवधारणा का विशद वर्णन किया है ।

जगत् मे जो कुछ है वह 'सत्' है । सत् अर्थात् अस्तित्वशील । जो सत् है उमी की मत्ता है । इस प्रकार जगत् की प्रत्येक वस्तु 'सत्' है । जैन दर्शन के अनुसार जो सत् है वह द्रव्य है । आचार्य कुन्दकुन्द ने द्रव्य का लक्षण बताया है—

द्रव्य सल्लक्षणीय उत्पादव्ययधुवत्तसजुत ।

गुणपज्जयासय वा ज त भण्णति सव्वण्हु ॥१०॥

पचास्तिकाय,

जिसका लक्षण सत् है वह द्रव्य है । जो उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य से युक्त है वह द्रव्य है । जो गुण और पर्याय का आश्रय है वह द्रव्य है ।

द्रव्य छह प्रकार के हैं—जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल । प्रत्येक द्रव्य का अस्तित्व, स्वरूप, गुण और परिणमन भिन्न है, पृथक् है । छहो द्रव्यो मे जीव ही चेतन है शेष सब अचेतन—जड है । जानना-देखना जीव का स्वभाव है । वह अन्य द्रव्यो को उनके स्वभाव से जाने, उनके अपने से भिन्न स्वरूप को समझे, अपने को उनमे घुला-मिला न समझे, यह भली-भाति समझाने के लिए, छहो द्रव्यो के स्वरूप से परिचय कराने के दृष्टिकोण से आचार्यों ने उनका विशद वर्णन किया है ।

गूढ, गभीर एवं बृहद् ग्रंथों का 'स्वाध्याय' आज की व्यस्त एवं गतिशील जीवन-शैली में कठिन होता जा रहा है। 'लघु संस्करण' समय की मांग है। इसी विचार से हमारे सहयोगी डॉ० कमलचन्दजी सोगाणी ने आचार्य कुन्दकुन्द के विभिन्न ग्रंथों से 'द्रव्य' सम्बन्धी महत्वपूर्ण गाथाओं का संकलन किया है जो आपके समक्ष 'आचार्य कुन्दकुन्द द्रव्य विचार' के रूप में प्रस्तुत है। इस प्रकार के संकलन मूल ग्रंथों की उपादेयता या महत्व को कम नहीं करते अपितु पाठकों को बृहद् ग्रंथों से विशिष्ट विषय से सम्बन्धित संक्षिप्त, क्रमबद्ध एवं प्रासंगिक भागों 'एक ही स्थान पर' उपलब्ध करा कर विषय को सरल, सहजगम्य और मुरुचिपूर्ण रूप में प्रस्तुत करते हैं।

बड़े-बड़े ग्रंथों का आलोडन कर उनमें से कुछ विशिष्ट गाथाओं का चयन कर अत्यन्त संक्षेप में 'चयनिका' के रूप में ग्रंथ का सार प्रस्तुत कर देना डॉ० सोगाणी की अपनी शैली है, पृथक् पहचान है। यह पुस्तक भी उनकी इसी शैली का निदर्शन है। इस पुस्तक की एक विशेषता और है—इसमें मूलगाथा, उसका व्याकरणिक विश्लेषण और उसके आधार से निसृत हिन्दी अनुवाद दिया गया है जिससे पाठक प्राकृत-व्याकरण को भी समझ सकें और आचार्यश्री के मूलहार्द को भी।

हमारे आग्रह पर उन्होंने अल्प समय में ही यह संकलन तैयार किया इसके लिए हम उनके आभारी हैं।

मुद्रण के लिए पॉपुलर प्रिन्टर्स धन्यवादाह है।

महावीर निर्वाण दिवस 2516
दीपमालिका, वि स 2046
जयपुर

ज्ञानचन्द्र खिन्डूका
संयोजक
जैनविद्या संस्थान समिति

प्रस्तावना

यह बात निर्विवाद है कि हम विभिन्न वस्तुओं के सम्पर्क में आते रहते हैं। हम आँखों से रंग देखते हैं, कानों में ध्वनि सुनते हैं, नाक से गंध का ग्रहण करते हैं, जीभ से स्वाद लेते हैं तथा स्पर्शन में स्पर्श का अनुभव करते हैं। इस तरह में हम अपनी पाँचों इन्द्रियों द्वारा वस्तुओं से ससर्ग बनाये रखते हैं। इन्द्रियों के माध्यम में हम वस्तु-जगत् से जुड़े रहते हैं। यह वस्तु-जगत् ही आचार्य कुन्दकुन्द के शब्दों में पुद्गल द्रव्य है। उस पुद्गल द्रव्य में वर्ण, रस, गंध और स्पर्श वर्तमान रहते हैं तथा जो विभिन्न प्रकार का शब्द है, वह भी पुद्गल है (9)। पुद्गल के क्षेत्र को ममभाते हुए आचार्य कुन्दकुन्द कहते हैं कि इन्द्रिया तथा इन्द्रियों द्वारा भोगे जाने योग्य विषय, शरीर, बाणी तथा अन्य भौतिक वस्तुएँ सभी पुद्गल पिण्ड हैं (113, 114)।

पुद्गलात्मक वस्तुओं के साथ-साथ हमारे चारों ओर वनस्पति, कीट, पशु-पक्षी और मनुष्य भी वर्तमान हैं। इन सभी में एक ओर पुद्गल के गुण वर्तमान हैं तो दूसरी ओर बढ़ना, मयभीत होना तथा सुखी-दुःखी होने की स्थितियाँ भी दृष्टिगोचर होती हैं। इस तरह से यह दो द्रव्यों की मिश्रित अवस्था है। एक ओर पुद्गल द्रव्य है तो दूसरी ओर जीव द्रव्य। आचार्य कुन्दकुन्द इन सभी को मगार में स्थित जीव कहते हैं (22), यह दो द्रव्यों की मिश्रित अवस्था है। पुद्गल के साथ जीव की उपस्थिति ही में यह मिश्रण उत्पन्न होता है। पुद्गल जीव को विभिन्न अंशों में आवद्ध किये हुए रहता है। पुद्गल और जीव की मिश्रित अवस्था में जब पुद्गल जीव पर अधिकतम दबाव डालता है तो एक इन्द्रिय (स्पर्शन) ही का विकास हो पाता है। जैसे-जैसे यह दबाव कम होता जाता है वैसे-वैसे दो इन्द्रियाँ (स्पर्शन और रसना), तीन इन्द्रियाँ (स्पर्शन, रसना और घ्राण), चार इन्द्रियाँ, (स्पर्शन, रसना, घ्राण और चक्षु) और पाँच इन्द्रियाँ (स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण) विकसित हो जाती हैं (28-34)।

आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है कि एक इन्द्रियवाले जीवों में केवल सुख-दुःखात्मक चेतना ही क्रियाशील होती है। दो इन्द्रिय में पचेन्द्रिय तक के जीवों

मे (शुभ-अशुभ) प्रयोजनात्मक चेतना का विकास हो जाता है। यहाँ यह समझना चाहिए कि प्रयोजनात्मक चेतना मनुष्य में ही पूर्णरूप में प्रकट होती है। बाकी जीवों में इसका प्रकटीकरण अचेतन स्थिति में ही होता है। विचार का विकास मनुष्य की ही उपलब्धि है। विचार के विकास के साथ ही उद्देश्यात्मक जीवन का विकास होकर शुभ-अशुभ प्रयोजनों में जीने का विकास हो जाता है (24 से 28)।

यह समझ माना गया है कि जीव पर पुद्गल का दबाव कम होते-होते शून्य हो जाए। ऐसी स्थिति में जीव अपने स्वरूप में स्थित हो जाता है। ऐसा जीव ज्ञान-चेतना वाला कहा गया है। इस तरह में पुद्गल के दबाव में रहित जीव ज्ञान-चेतना वाला रहता है और पुद्गल के दबाव से युक्त जीव प्रयोजन-चेतना और (सुखदुःखात्मक) फल-चेतना को लिये हुए होता है (24 से 27)। आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है कि कुछ जीव सुख दुःखात्मक फल को, कुछ शुभ-अशुभ प्रयोजन को तथा कुछ ज्ञान को अनुभव करते हैं (25)। यहाँ पर यह ध्यान देने योग्य है कि जीव और पुद्गल की मिश्रित अवस्था का अनुभव सभी की सामान्य अनुभूति है, किन्तु पुद्गल के दबाव में रहित जीव की अनुभूति केवल तीर्थंकरों या योगियों की ही अनुभूति होती है।

यह सर्व-अनुभूत तथ्य है कि पौद्गलिक वस्तुओं में अवस्था-परिवर्तन होता है। इसी परिवर्तन को पर्याय कहा गया है। पौद्गलिक मिश्रण के कारण जीव की अवस्थाओं में भी परिवर्तन होता है। पुद्गल के निमित्त से जीव क्रिया-महित होते हैं (13)। परिवर्तन और क्रिया काल द्रव्य के कारण उत्पन्न होते हैं (138)। परिवर्तन का अर्थ है एक अवस्था के बाद दूसरी अवस्था का आना। यह काल द्रव्य के बिना संभव नहीं है। क्रिया में जो निमित्त है वह धर्म द्रव्य है तथा स्थिति में जो निमित्त है वह अधर्म द्रव्य है। द्रव्यों को स्थान देने के लिए आकाश द्रव्य है। इस तरह से लोक में 6 द्रव्यों की व्यवस्था है (14, 134)। आचार्य कुन्दकुन्द का कहना है कि अनेक जीव, पुद्गलों का समूह, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये वास्तविक द्रव्य कहे गये हैं। ये सभी द्रव्य अनेक गुण और पर्यायों सहित होते हैं (6)।

आचार्य कुन्दकुन्द के अनुसार जो गुण और पर्याय का आश्रय है वह द्रव्य है (139)। इसका अभिप्राय यह है कि गुण और पर्याय को छोड़कर द्रव्य कोई स्वतन्त्र वस्तु नहीं है। दूसरे शब्दों में द्रव्य गुणों और पर्यायों के बिना नहीं होता, तथा गुण और पर्याय द्रव्य के बिना नहीं होती (142, 143)। उदाहरणार्थ, स्वर्ण

से पृथक् उसके पीनेपन आदि गुणों का तथा कुण्डल आदि पर्यायों का अस्तित्व सम्भव नहीं है। अतः यह स्पष्ट है कि जो नित्यरूप से द्रव्य में पाया जाय वह गुण है और जो परिवर्तनशील है वह पर्याय है। सक्षेप में, पर्याय परिणामनशील होती है और गुण नित्य। इसके अतिरिक्त गुण वस्तु में एक साथ ही विद्यमान रहते हैं किन्तु पर्यायें क्रमशः उत्पन्न होती हैं। वस्तु के विभिन्न आकारों को व्यजन पर्याय कहा गया है। उदाहरणार्थ—जीव का मनुष्य, देव आदि विभिन्न योनियों में जन्म लेना जीव की व्यजन पर्यायें हैं। पर्याय का एक दूसरा भेद और है जिसे अर्थ पर्याय कहा गया है। बात यह है कि वस्तु के गुणों की अवस्थाओं में प्रत्येक क्षण परिवर्तन होता रहता है, जैसे—जड़ वस्तु में रूप आदि गुण तो सदैव विद्यमान रहते हैं, किन्तु इन गुणों की अवस्थाएँ परिवर्तित होती रहती हैं। इसी के फलस्वरूप यह कहा जाता है कि वस्तु नई से पुरानी हो गई, मोठी में खट्टी हो गई इत्यादि। यहाँ वस्तु में रूप, रस आदि का लोप नहीं हुआ किन्तु उनकी अवस्थाएँ बदल गईं। परिवर्तन का यह क्रम अनन्त है। उस प्रकार के परिवर्तन को अर्थ पर्याय कहा गया है। अतः वस्तु में व्यजन पर्याय और अर्थ पर्याय दोनों ही सदा उपस्थित रहती हैं। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिये कि द्रव्य का गुण-पर्याय-वाला होना द्रव्य को नित्य-अनित्य या परिणामी-नित्य मिश्र करता है। द्रव्य गुण-अपेक्षा नित्य है और पर्याय-अपेक्षा अनित्य या परिणामी।

द्रव्य की एक दूसरी परिभाषा भी आचार्य कुन्दकुन्द ने दी है जो उपर्युक्त परिभाषा में तत्त्वतः भिन्न नहीं है। उसके अनुसार द्रव्य वह है जो सत् है और मत उमें कहते हैं जो उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य-युक्त हो (139)। अर्थात् जिसमें उत्पत्ति, विनाश और स्थिरता एक समय में पाई जावे वह सत् है। उदाहरणार्थ—स्वर्ण के ककण में जब कुण्डल बनाये जाते हैं तो कुण्डल पर्याय की उत्पत्ति, ककण पर्याय का विनाश और पीने आदि गुणोंवाले स्वर्ण की स्थिरता एक समय में स्पष्टगोचर होती है। यह उदाहरण व्यजन पर्याय का है। द्रव्य का उत्पाद, व्यय और ध्रौव्यात्मक लक्षण अर्थ पर्यायवाले उदाहरण में भी घटित होता है जैसे—दही मोठे से गट्टा हुआ तो रस गुण की मोठी पर्याय का व्यय (विनाश) हुआ, खट्टी पर्याय का उत्पाद (उत्पत्ति) हुआ और दही की ध्रौव्यता (स्थिरता) ज्यों की त्यों रही। इस तरह से उत्पत्ति और विनाश पर्यायाश्रित है और स्थिरता गुणाश्रित। अतः हम कह सकते हैं कि द्रव्य की ये विभिन्न परिभाषाएँ इस बात की द्योतक हैं कि द्रव्य नित्यानित्यात्मक या परिणामी-नित्य है।

द्रव्य के छ भेद हैं—(1) जीव, (2) पुद्गल, (3) धर्म, (4) अधर्म,

(5) आकाश और (6) काल । किन्तु जीव और अजीव के भेद में द्रव्य को दो भागों में भी विभाजित किया जा सकता है क्योंकि पुद्गल में लेकर काल तक के सभी द्रव्य अजीव में समाविष्ट हैं (3) । इस तरह में आचार्य कुन्दकुन्द एक और अनेकत्ववादी हैं तो दूसरी ओर द्वित्ववादी, परन्तु यदि सत्ता सामान्य के दृष्टिकोण से विचार किया जाय तो जीव-अजीव का भेद ही सम्पादित हो जाता है । सत्ता सब द्रव्यों में व्याप्त है (140) । इस अपेक्षा में सब द्रव्य एक ही हैं । अपने विशेष गुणों के कारण उन सब द्रव्यों में भेद है किन्तु सत्ता की अपेक्षा सब द्रव्यों में अभेद है । यह निश्चित है कि कोई भी द्रव्य सत्ता का उल्लंघन नहीं कर सकता (1) । यह सत्ता सामान्य का दृष्टिकोण आचार्य कुन्दकुन्द को एकत्ववादी घोषित करता है । इस तरह में एकत्ववाद, द्वित्ववाद और अनेकत्ववाद तीनों ही आचार्य कुन्दकुन्द के द्रव्य में वर्तमान हैं । अब हम यहाँ प्रत्येक द्रव्य की पृथक्-पृथक् व्याख्या करेंगे ।

जीव अथवा आत्मा—आचार्य कुन्दकुन्द के अनुसार जीव अथवा आत्मा स्वतन्त्र अस्तित्ववाला द्रव्य है । अपने अस्तित्व के लिए न तो यह किसी दूसरे द्रव्य पर आश्रित है और न इस पर आश्रित कोई और दूसरा द्रव्य है, सब द्रव्यों में जीव ही श्रेष्ठ द्रव्य है, क्योंकि केवल जीव को ही हित-अहित, हेय-उपादेय, सुख-दुःख आदि का ज्ञान होता है (5) । अन्य द्रव्यों-पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश काल में इस प्रकार के ज्ञान का सर्वथा अभाव होता है । द्रव्य की सामान्य परिभाषा के अनुसार आत्मा परिणामी-नित्य है । द्रव्य-गुण अपेक्षा से आत्मा नित्य है किन्तु पर्याय अपेक्षा से परिणामी । आत्मा के ज्ञानादि गुणों की अवस्थाएँ परिवर्तित होती रहती हैं तथा ससारी आत्मा-विभिन्न जन्म ग्रहण करता है, इन अपेक्षाओं से आत्मा परिणामी है और आत्मा कभी भी इन परिवर्तनों में नष्ट नहीं होता, इस अपेक्षा से नित्य है (145, 146, 147) । यहाँ यह कहा जा सकता है कि यह लक्षण ससारी आत्मा में तो घटित हो जाता है, किन्तु मुक्त आत्मा में नहीं । किन्तु ऐसा कहना उचित नहीं है, क्योंकि मुक्त-आत्मा की नित्यता के विषय में तो सदेह है ही नहीं और उसमें ज्ञानादि गुणों का स्वस्व परिणमन होता है इस अपेक्षा से वह परिणामी भी सिद्ध होती है । अतः आत्मा द्रव्य-गुण-दृष्टि से नित्य और पर्याय-दृष्टि से परिणामी स्वीकार किया गया है ।

यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि आचार्य कुन्दकुन्द के अनुसार आत्मा एक नहीं अनेक अर्थात् अनन्त माने गये हैं । आत्मा का लक्षण चैतन्य है (7) इस विशेषता के कारण आत्मा का अन्य द्रव्यों से भेद होता है । यह चैतन्य ज्ञानात्मक,

भावात्मक और क्रियात्मक रूप से प्रकट होता है। अतः हम कह सकते हैं कि जहाँ चैतन्य है वहाँ ज्ञान है, भाव है और क्रिया है। ज्ञान या चेतना आत्मा का आगन्तुक धर्म नहीं है किन्तु स्वभाव/स्वाभाविक धर्म है (53, 54)। आत्मा ज्ञान होने के साथ-साथ कर्ता और भोक्ता भी है। आत्मा ससार अवस्था में अपने शुभ-अशुभ कर्मों का कर्ता है और उनके फल-स्वरूप उत्पन्न सुख-दुःख का भोक्ता भी है (20)। मुक्त अवस्था में आत्मा अनन्तज्ञान का स्वामी होता है, शुभ-अशुभ से परे शुद्ध क्रियाओं का (राग-द्वेष-रहित क्रियाओं का) कर्ता होता है और अनन्त आनन्द का भोक्ता होता है।

आचार्य कुन्दकुन्द जीव को स्वदेह परिमाण स्वीकार करते हैं। जिस प्रकार दूध में डाली हुई पदमरागमणि (लालमणि) उसे अपने रंग से प्रकाशित कर देती है, उसी प्रकार देह में रहनेवाला जीव भी अपनी देहमात्र को प्रकाशित करता है अर्थात् वह स्वदेह में ही व्याप्त होता है, देह से बाहर नहीं (35)।

आचार्य कुन्दकुन्द की मान्यता है कि ससारी आत्मा अनादिकाल से कर्मों से बद्ध है। इसी कारण प्रत्येक मसारी जीव जन्म-मरण के चक्कर में पड़ा रहता है। इतना होते हुए भी प्रत्येक मसारी आत्मा वस्तुतः सिद्ध समान है (23)। दोनों में भेद केवल कर्मों के बन्धन का है। यदि कर्मों के बन्धन को हटा दिया जाय तो आत्मा का सिद्ध-स्वरूप जो अनन्त ज्ञान, सुख और शक्ति रूप है, प्रकट हो जाता है।

आचार्य कुन्दकुन्द के अनुसार जीव को प्रभु (अपने विकास में समर्थ) कहा गया है (20) इसका अन्विष्टा यह है कि जीव स्वयं ही अपने उत्थान व पतन का उत्तरदायी है। वही अपना शत्रु है और वही अपना मित्र। बन्धन और मुक्ति उसी के आश्रित हैं। अज्ञानी से ज्ञानी होने का और बद्ध से मुक्त होने का सामर्थ्य उसी में है, वह सामर्थ्य कहीं बाहर से नहीं आता, वह तो उसके प्रयास से ही प्रकट होता है।

आचार्य कुन्दकुन्द ने जीवों का वर्गीकरण दो दृष्टिकोण से किया है— (1) सामारिक और (2) आध्यात्मिक। सासारिक दृष्टिकोण से जीवों का वर्गीकरण इन्द्रियों की अपेक्षा से किया गया है (29 से 34)। सबसे निम्न स्तर पर एक इन्द्रिय जीव है जिनके केवल एक स्पर्शन इन्द्रिय ही है। वनस्पति वर्ग एक इन्द्रिय जीवों का उदाहरण है। इनमें चेतना सबसे कम विकसित होती है। इनमें उच्चस्तर के जीवों में दो से पाँच इन्द्रियों तक के जीव हैं। सीपी, शूख, बिना पैरों के

कौड़े आदि के स्पर्शन और रसना ये दो इन्द्रिया होती है । (31) । जूँ, खटमलें, चीटी, बिच्छू आदि के स्पर्शन, रसना और घ्राण ये तीन इन्द्रिया होती हैं । (32) । मच्छर, मक्खी, भँवरा आदि जीवों के स्पर्शन, रसना, घ्राण और चक्षु ये चार इन्द्रिया होती हैं । (33) । मनुष्य, पशु-पक्षी आदि जीवों के स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण ये पाँच इन्द्रिया होती हैं (34) ।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण से जीव तीन प्रकार के हैं—बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा । जो व्यक्ति यह मानता है कि इन्द्रिया ही परम मत्त हैं, वह बहिरात्मा है (41) । बहिरात्मा शरीर को ही आत्मा समझता है और शरीर के नष्ट होने पर अपने को नष्ट हुआ समझता है । वह इन्द्रियों के विषयों में आसक्त रहता है, वह इच्छित वस्तु के संयोग से प्रसन्न होता है और उसके वियोग में अप्रसन्न । वह मृत्यु के भय से आक्रान्त रहता है । वह कार्मण-शरीर-रूपी काचली में ढके हुए ज्ञान-रूपी शरीर को नहीं जानता है, इसलिए बहुत काल तक वह संसार में भ्रमण करता है ।

अन्तरात्मा अपने आत्मा को अपने शरीर में निम्न समझता है (41) । यह निर्भय होता है अतः उसे लोकभय, परलोकभय, मरणभय आदि नहीं होते । उसके कुल, जाति, रूप, ज्ञान, धन, बल, तप और प्रभुता का मद नहीं होता । आत्मत्व में रुचि पैदा होने से उसकी मासारिक पदार्थों में आसक्ति नहीं होती और वह शीघ्र ही जन्म-मरण के चक्कर से छूट जाता है ।

परमात्मा वह है जिसने आत्मोत्थान में पूर्णता प्राप्त कर ली है और काम, क्रोधादि दोषों को नष्ट कर लिया है एवं अनन्त ज्ञान, अनन्त शक्ति और अनन्त सुख प्राप्त कर लिया है तथा जो सदा के लिए जन्म-मरण के चक्कर में मुक्त हो गया है (41) ।

आचार्य कुन्दकुन्द का कहना है कि साधक बहिरात्मा को छोड़े और अन्तरात्मा बनकर परमात्मा की ओर अग्रसर हो (42) ।

पुद्गल-जिसमें रूप, रस, गंध और स्पर्श ये चारों गुण पाये जावें, वह पुद्गल है (9) । सब दृश्यमान पदार्थ पुद्गलों द्वारा निर्मित हैं । पुद्गल द्रव्य के दो भेद हैं—परमाणु और स्कन्ध । दो या दो से अधिक परमाणुओं के मेल को स्कन्ध कहते हैं । जो पुद्गल का सबसे छोटा भाग है, जिसे इन्द्रिया ग्रहण नहीं कर सकती और जो अविभागी है, वह परमाणु है (109) । परमाणु अविनाशी तथा

शब्दरहित होता है (109) । शब्द की उत्पत्ति स्कन्धों के परस्पर टकराने से होती है (111) ।

आचार्य कुन्दकुन्द के अनुसार प्रत्येक परमाणु चार गुण वाला होता है । इन परमाणुओं के विभिन्न प्रकार के संयोगों से नानाविध पदार्थ बन जाते हैं (110) । अतः पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु ये चारों तत्त्व विभिन्न प्रकार के परमाणुओं से निर्मित नहीं हैं अपितु एक ही प्रकार के परमाणुओं से उत्पन्न हैं । यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि प्रत्येक परमाणु में पाँच रसों (तीता, खट्टा, कड़वा, मीठा और कसैला) में से कोई एक रस, पाँच रूपों (काला, नीला, पीला, सफेद और लाल) में से कोई एक रूप, दो गन्धों (सुगन्ध और दुर्गन्ध) में से कोई एक गन्ध, चार स्पर्शों, (रुक्ष, स्निग्ध, शीत और उष्ण) में से कोई दो अवरोधी स्पर्श होते हैं (112) । परमाणु या तो रुक्ष-शीत या रुक्ष-ऊष्ण या स्निग्ध-शीत या स्निग्ध-उष्ण होता है । कोमल, कठोर, भारी और हल्का ये चार स्पर्श स्कन्ध अवस्था में ही उत्पन्न होते हैं ।

यहाँ यह प्रश्न उपस्थित होता है कि परमाणुओं में बन्ध किस प्रकार होता है ? उनके उत्तर में आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है कि परमाणु के परस्पर बन्ध का कारण स्निग्धता और रुक्षता है । स्निग्ध-गुण और रुक्ष गुण के अनन्त अंश हैं । जिस प्रकार बकरी, गाय, भैंस और ऊँट के दूध तथा घी में उत्तरोत्तर अधिक रूप में स्निग्ध-गुण, रहता है और घूल, बालू तथा बजरी आदि में उत्तरोत्तर अधिक रूप में रुक्ष गुण रहता है उसी प्रकार में परमाणुओं में भी स्निग्ध और रुक्ष गुणों के न्यूनाधिक अंशों का अनुमान होता है ।

परमाणुओं का परस्पर बन्ध कुछ नियमों के अनुसार माना गया है । जो परमाणु स्निग्धता और रुक्षता गुण में निम्नतम है उसका बन्ध किसी भी परमाणु में नहीं होता । इसके अतिरिक्त जिन परमाणुओं में स्निग्धता और रुक्षता के समान अंश हैं उनका भी किसी भी दूसरे परमाणु से बन्ध नहीं होता । परन्तु जिनमें स्निग्धता और रुक्षता के अंश दूसरे परमाणुओं से दो अधिक हों उनमें आपस में बन्ध होता है जैसे दो अंश वाले का चार अंश वाले से, चार का छ अंश वाले से, इसी प्रकार तीन का पाँच अंश वाले से, पाँच का सात अंश वाले से, इसी तरह आगे भी जानना चाहिये (117, 118) । यहाँ यह बात स्मरणीय है कि अधिक गुणवाला परमाणु अल्प गुणवाले परमाणु को अपने रूप में परिवर्तित कर लेता है । इस तरह परमाणुओं में संयोग-मात्र ही नहीं होता बल्कि उनमें परस्पर आकर्षण स्थापित हो जाता है ।

(x)

परिणमन की व्याख्या काल द्रव्य को स्वीकार किये बिना नहीं हो सकती। काल द्रव्य किसी का बलपूर्वक परिणमन नहीं कराता, वह तो उन परिणमनशील पदार्थों के परिणमन में सहायकमात्र होता है। जिस प्रकार शीत ऋतु में स्वयं अध्ययन-क्रिया करते हुए पुरुष को अग्नि सहकारी है और जिस प्रकार स्वयं घूमने की क्रिया करते हुए कुम्हार के चाक को नीचे की कीली सहकारी है उसी प्रकार स्वयं परिणमन करते हुए पदार्थों की परिणमन-क्रिया में काल सहकारी है।

काल के दो भेद हैं (137)-1 व्यवहार काल और 2 परमार्थ (द्रव्य) काल। सैकिड, मिनिट, घंटा, दिन, महीने, वर्ष आदि व्यवहार काल हैं। यह क्षणभंगुर और पराश्रित है। इसकी माप पुद्गल द्रव्य के परिणमन के बिना नहीं हो सकती (136)। परमार्थ काल नित्य और स्वाश्रित है। परिवर्तन, एक स्थान से दूसरे स्थान में गति, धीरे और शीघ्र, युवा और वृद्ध, नवीनता और प्राचीनता आदि व्यवहार बिना व्यवहार काल के समभव नहीं है।

यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि द्रव्यों के स्वरूप को समझने के साथ-साथ आचार्य कुन्दकुन्द का उद्देश्य मनुष्य को आध्यात्मिक विकास की चरम सीमा पर अग्रसर होने के लिए प्रेरित करना है जिसमें वह तनावमुक्त जीवन जी सके। उनकी प्रेरणा है कि व्यक्ति स्व-चेतना की स्वतन्त्रता को जीये। यह स्वतन्त्रता का जीवन ही ममता का जीवन है (104)। ऐसे व्यक्ति का सुख आत्मोत्पन्न, विषयातीत, अनुपम, अनन्त और अविच्छिन्न होता है (102)। ऐसा व्यक्ति ही परम धान्तिरूपी सुख को प्राप्त कर सकता है (103)।

आचार्य कुन्दकुन्द का मानना है कि स्वतन्त्रता आत्मा का स्वभाव है। परतन्त्रता कारणों द्वारा थोपी हुई है। किन्तु व्यक्ति परतन्त्रता के कारणों को इतनी दृढ़ता से पकड़े हुए है कि परतन्त्रता स्वाभाविक प्रतीत होती है, किन्तु मानसिक तनाव की उत्पत्ति इस स्वाभाविकता के लिए चुनौती है। आत्मा को स्वतन्त्र समझने की दृष्टि निश्चयनय है और उसको परतन्त्र मानने की दृष्टि व्यवहारनय है। जब आत्मा की पर से स्वतन्त्रता स्वाभाविक है तो आत्मा की परतन्त्रता अस्वाभाविक होगी ही। इसीलिये कहा गया है कि निश्चयनय (शुद्ध नय) वास्तविक है और व्यवहारनय अवास्तविक है (45)। ठीक ही है जो दृष्टि स्वतन्त्रता का बोध कराए वह दृष्टि वास्तविक ही होगी और जो दृष्टि परतन्त्रता के आधार से निर्मित हो वह अवास्तविक ही रहेगी। आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है कि जो दृष्टि आत्मा को स्थायी, अनुपम, कर्मों के बन्ध से रहित, रागादि में न झुआ हुआ तथा अन्य से अमिश्रित देखती है वह निश्चयनयात्मक

दृष्टि है (43)। इस तरह से निश्चयनय में आत्मा में पुद्गल के कोई भी गुण नहीं हैं। अतः आत्मा रसरहित, रूपरहित, गन्धरहित, तथा अदृश्यमान है, उसका स्वभाव चेतना है। उसका ग्रहण विना किसी चिह्न के (केवल अनुभव में) होता है और उसका आकार अप्रतिपादित है (44)।

आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है कि व्यवहार नय के अनुसार आत्मा अनेक प्रकार के पुद्गल कर्मों को करता है तथा वह अनेक प्रकार के पुद्गल कर्मों के फलों को भोगता है (79) चूँकि व्यवहारनय चेतना की परतन्त्रता में निर्मित दृष्टि है इसीलिए अज्ञानी कर्ता व्यवहारनय के आश्रय से चलता है। निश्चयनय के अनुसार आत्मा पुद्गल कर्मों को उत्पन्न नहीं करता है। चूँकि निश्चय-दृष्टि चेतना की स्वतन्त्रता पर आश्रित दृष्टि है, इसीलिए ज्ञानी कर्ता निश्चयनय के आश्रय से चलता है। सच तो यह है कि आत्मा जिस भाव को अपने में उत्पन्न करता है वह उसका कर्ता होता है। ज्ञानी का यह भाव ज्ञानमय होता है और अज्ञानी का भाव अज्ञानमय होता है (75)। जैसे कनकमय वस्तु में कनक कुण्डल आदि वस्तुएं उत्पन्न होती हैं और लोहमय वस्तु में लौह कड़े आदि उत्पन्न होते हैं, वैसे ही अज्ञानी के अनेक प्रकार के अज्ञानमय भाव ही उत्पन्न होते हैं तथा ज्ञानी के सभी भाव ज्ञानमय होते हैं (76,77)।

आचार्य कुन्दकुन्द ने तीन प्रकार के भावों का (शुभ, अशुभ और शुद्ध) विश्लेषण करते हुए कहा है कि शुद्ध भाव ही ग्रहण किया जाना चाहिये, व्यक्ति की उच्चतम अवस्था इसी को ग्रहण करने में उत्पन्न होती है। जिस व्यक्ति का जीवन विषय-कषायों में डूबा हुआ है, जिसका जीवन दुष्ट मिद्वान्त, दुष्ट बुद्धि तथा दुष्टचर्या में जुड़ा हुआ है, जिसके जीवन में क्रूरता है तथा जो कुपथ में लीन है, वह अशुभ-भाव को धारण करने वाला कहा जाता है (92) जो व्यक्ति जीवों पर दयावान है, देव, मायु तथा गुरु की भक्ति में लीन है, जिसके जीवन में अनुकम्पा है, जो भूखे-प्यासे तथा दुःखी प्राणी को देखकर उसके साथ दयालुता में व्यवहार करता है वह शुभ-भाव वाला कहा गया है (91, 82, 84, 86)। जीव का शुभ-भाव ही पुण्य है, और अशुभ-भाव ही पाप है। आचार्य कुन्दकुन्द का कहना है कि जो व्यक्ति पाप में उत्पन्न मानसिक तनाव को समाप्त करता है तथा पुण्य क्रियाओं से उत्पन्न मानसिक तनाव को समाप्त करता है वही व्यक्ति शुद्ध भाव की भूमिका पर आरुढ़ होता है। ऐसा व्यक्ति ही शुद्धोपयोगी कहलाता है। वही व्यक्ति पूर्णतया समतावान होता है।

पूर्ण समतावान बनने के लिए चारित्र्य की माधना महत्वपूर्ण है। जो व्यक्ति निश्चयनय के आश्रय में चलता है वही सम्यक्दृष्टि होता है (45) क्योंकि

वही एक ऐसा व्यक्ति है जिसको आत्मा के स्वतन्त्र स्वभाव पर पूर्ण श्रद्धा है। सम्यक्दृष्टि के जीवन में एक ऐसे भुकाव का उदय होता है जो उसे चारित्र्य की माधना करने के लिए प्रेरित करता है। आचार्य कुन्दकुन्द का कथन है कि जिस व्यक्ति में रागादि भावों का अशमात्र भी विद्यमान है वह अभी तक स्वतन्त्रता के महत्व को नहीं समझता है (99)। जो व्यक्ति शुद्धात्मक तत्त्व से अपरिचित है और व्रतों और नियमों को धारण कर रहा है वह परम शान्ति को प्राप्त नहीं कर सकता है (95, 96)। जो व्यक्ति आत्मा के स्वभाव को समझता है वह आत्मिक में रहित होता हुआ आत्मा की स्वतन्त्रता का उपभोग करने लग जाता है। आत्मिक व्यक्ति ही परतन्त्रता का जीवन जीता है (71)। यह निश्चित है कि वस्तु के महारों में ही मनुष्यों को आसक्तिपूर्ण विचार होता है, तो भी वास्तव में वस्तु व्यक्ति को परतन्त्र नहीं बनाती है। व्यक्ति की परतन्त्रता तो वस्तु के प्रति आत्मिक से ही उत्पन्न होती है (70)। अतः जो व्यक्ति आसक्तिरहित होता है वह कर्मों में छुटकारा पा जाता है, समतामय जीवन जीता है और शुद्धोपयोगी बन जाता है (71)।

यह कहा जा चुका है कि निश्चयनय चेतना की स्वतन्त्रता से उत्पन्न दृष्टि है और व्यवहार नय चेतना की परतन्त्रता में उत्पन्न दृष्टि है। ये दोनों ही दृष्टियाँ बौद्धिक हैं। किन्तु शुद्धात्मा का अनुभव नयातीत है, वह बुद्धि से परे है (47)। ऐसा अनुभव होने पर केवल ज्ञान का उदय होता है, वह व्यक्ति सभी इन्द्रियों की पराधीनता में दूर हो जाता है और उसमें एक ऐसे सुख का उदय होता है जो इन्द्रियातीत होता है।

उपर्युक्त विवेचन में स्पष्ट है कि आचार्य कुन्दकुन्द ने द्रव्यों का विवेचन बहुत ही मृदुता से किया है। इसी विशेषता से प्रभावित होकर आचार्य कुन्दकुन्द के द्रव्य-विचार को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए हर्ष का अनुभव हो रहा है। गाथाओं के हिन्दी अनुवाद को मूलानुगामी बनाने का प्रयास किया गया है। यह दृष्टि रही है कि अनुवाद पढ़ने से ही शब्दों की विभक्तियाँ एवं उनके अर्थ समझ में आ जाएँ। अनुवाद को प्रवाहमय बनाने की भी इच्छा रही है। कहा तक सफलता मिली है, इसको तो पाठक ही बता सकेंगे। अनुवाद के अतिरिक्त गाथाओं का व्याकरणिक विश्लेषण भी प्रस्तुत किया गया है। इस विश्लेषण में जिन संकेतों का प्रयोग किया गया है उनको संकेत-सूची में देखकर समझा जा सकता है। यह आशा की जाती है कि इसमें प्राकृत को व्यवस्थित रूप में सीखने में सहायता मिलेगी तथा व्याकरण के विभिन्न नियम सहज में ही सीखे जा सकेंगे।

यह सर्वविदित है कि किसी भी भाषा को सीखने के लिए व्याकरण का ज्ञान अत्यावश्यक है। प्रस्तुत गाथाएँ एवं उनके व्याकरणिक विश्लेषण में व्याकरण के साथ-साथ शब्दों के प्रयोग भी सीखने में मदद मिलेगी। शब्दों की व्याकरण और उनका अर्थपूर्ण प्रयोग दोनों ही भाषा सीखने के आधार होते हैं। अनुवाद एवं व्याकरणिक विश्लेषण जैसा भी बन पाया है पाठकों के समक्ष है। पाठकों के सुझाव मेरे लिए बहुत ही काम के होंगे।

आभार

आचार्य कुन्दकुन्द द्रव्य-विचार पुस्तक को तैयार करने में समयभार, प्रवचन-सार, पचास्तिकाय, अष्टपाहुड, नियमभार के जिन सम्करणों का उपयोग किया गया है उनकी सूची अन्त में दी गई है। इन सम्करणों के सम्पादकों के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

सुश्री प्रीति जैन, जैनविद्या सस्थान, ने इस पुस्तक के अनुवाद को पटक उपयोगी सुझाव दिए तथा इसकी प्रस्तावना को रुचिपूर्वक पढ़ा, इसके लिए आभार प्रकट करता हूँ।

मेरी धर्मपत्नी श्रीमती कमलादेवी मोगाणी ने इस पुस्तक की गाथाओं के चयन में जो सुझाव दिए उनके लिए अपना आभार व्यक्त करना है।

इस पुस्तक को प्रकाशित करने के लिए जैनविद्या सस्थान, श्रीमहावीरजी के सयोजक श्री ज्ञानचन्द्रजी खिन्दूका ने जो व्यवस्था की है उनके लिए उनके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ।

एच-7, चितरजन मार्ग,
'सी'स्कीम, जयपुर-302001

कमलचन्द मोगाणी



आचार्य कुन्दकुन्द : द्रव्य-विचार

1. दव्वं सहावसिद्धं सदिति जिणा तच्चदो समक्खादो ।
सिद्धं तथ आगमदो णेच्छदि जो सो हि परसमगो ॥

2. एण हवदि जदि सद्व्वं असद्व्वं हवदि तं कधं दव्वं ।
हवदि पुणो अण्णं वा तम्हा दव्वं सयं सत्ता ॥

3 दव्वं जीवमजीवं जीवो पुण चेदणोवयोगमयो ।
पोगलदव्वप्पमुहं अचेदणं हवदि य अजीवं ॥

4. जाणदि पस्सदि सव्वं इच्छदि सुक्खं विभेदि दुक्खादो ।
कुव्वदि हिदमहिदं वा भुजदि जीवो फलं तेसि ॥

5 सुहदुक्खजाणणा वा हिदपरियम्मं च अदिदभीरुत्तं ।
जस्स एण विज्जदि णिच्चं तं समणा विति अज्जीवं ॥

6. जीवा पोगलकाया, धम्माधम्मा य काल आयासं ।
तच्चत्था इदि भणिदा, णाणागुणपज्जयेहि संजुत्ता ॥

1. द्रव्य सत् (है) । (वह) इस विवरणवाला (है) । (ऐसा) स्वभाव मे सिद्ध (है) । जितेन्द्रियो ने वास्तविक रूप से (ऐसा) कहा (है) । जो व्यक्ति आगम से स्थापित द्रव्य को ठीक इसी प्रकार स्वीकार नहीं करता है, वह निस्सन्देह असत्य दृष्टिवाला (है) ।
2. यदि द्रव्य सत् नहीं होता है (तो) वह द्रव्य असत् होगा । अथवा (यदि) (द्रव्य) सत् से भिन्न होता है, (तो) (वह) (सत्तारहित) (द्रव्य) नित्य कैसे (होगा) ? अतः द्रव्य स्वयं सत्ता (है) ।
3. द्रव्य (दो प्रकार का है)—जीव और अजीव । जीव चेतन (है) (तथा) उपयोगमय (ज्ञान स्वभाववाला) (है) । इसके विपरीत अजीव अचेतन होता है (जिसके अन्तर्गत) पुद्गल द्रव्यसहित (अन्य द्रव्य है) ।
4. जीव (तनावमुक्त अवस्था मे) सब को (केवल) देखता है, जानता है, (वह) (तनावयुक्त अवस्था मे) सुख चाहता है, दुःख से डरता है, उचित और अनुचित (कार्यों) को करता है तथा उनके फल को भोगता है ।
5. जिसमे कभी भी सुख-दुःख का ज्ञान, हित का उत्पादन तथा अहित से भय वर्तमान नहीं होता है, उसको श्रमण अजीव कहते हैं ।
6. अनेक जीव, पुद्गलो का समूह, धर्म, अधर्म, आकाश और काल- (ये) वास्तविक पदार्थ (द्रव्य) कहे गये (हैं) । (ये सभी) अनेक गुण और पर्यायो सहित (होते हैं) ।

7. आगासकालजीवा धम्माधम्मा य मुत्तिपरिहीणा ।
मुत्तं पुग्गलदव्वं जीवो खलु चेदणो तेसु ॥

8. जे खलु इंदियगेज्झा विसया जीवेहिं होति ते मुत्ता ।
सेसं हवदि अमुत्तं चित्तं उभयं समादियदि ॥

9. वण्णारसगंधफासा विज्जंते पुग्गलस्स सुहुमादो ।
पुढवीपरियंतस्स य सद्दो सो पोग्गलो चित्तो ॥

10-11. आगासस्सवगाहो धम्मद्वस्स गमणहेदुत्तं ।
धम्मेदरदव्वस्स दु गुणो पुणो ठाणकारणदा ॥
कालस्स वट्टणा से गुणोवओगोत्ति अप्पणो भणिदो ।
णेया संखेवादो गुणा हि मुत्तिप्पहीणाणं ॥

12. आगासकालपुग्गलधम्माधम्मेसु णत्थि जीवगुणा ।
तेसिं अचेदणत्तं भणिदं जीवस्स चेदणदा ॥

13. जीवा पुग्गलकाया सह सक्किरिया हवंति ण य सेसा ।
पुग्गलकरणा जीवा खधा खलु कालकरणा दु ॥

- 7 धर्म, अधर्म, आकाश, काल और जीव (द्रव्य) मूर्ति से रहित (अमूर्तिक) (होते हैं) । पुद्गल द्रव्य मूर्त (होता है) । उनमें जीव ही चेतन (कहा गया है) ।
8. जो पदार्थ जीवों द्वारा इन्द्रियो से ग्रहण किए जाने योग्य होते हैं, वे मूर्त (होते हैं) । शेष (पदार्थ-समूह) अमूर्त होता है । चित्त दोनों को भली प्रकार से समझता है ।
- 9 सूक्ष्म से पृथिवी तक फैले हुए पुद्गल में (अति सूक्ष्म से अति स्थूल तक) (मूर्त गुण)—वर्ण, रस, गंध और स्पर्श वर्तमान रहते हैं । (इसके अतिरिक्त) (जो) विभिन्न प्रकार का शब्द (है), वह भी पुद्गल है ।
- 10-11 (जो) स्थान (दिया जाता है), (वह) आकाश का गुण (है), (जो) गमन में निमित्तता (है), (वह) धर्म द्रव्य का (गुण) (है), और जो स्थिति (ठहरने) में कारणता (है), (वह) तो धर्म के विरोधी (अधर्म) द्रव्य का (गुण) (है), (जो) परिणमन (परिवर्तन) (होता है), (वह) काल (द्रव्य) का (गुण) (है), (जो) उपयोग (ज्ञान-चैतन्य) (है), (वह) आत्मा का गुण कहा गया (है) । (ये) गुण संक्षेप से मूर्तिरहित (अमूर्तिक) (द्रव्यों) के समझे जाने चाहिये ।
- 12 पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल में जीव के गुण नहीं (रहते हैं), (क्योंकि) उनमें अचेतनता कही गई (है) । (उनके विपरीत) जीव में चेतनता (मानी गई है) ।
- 13 जीव (और) पुद्गलराशि (दोनों) साथ-साथ क्रियासहित होते हैं । किन्तु शेष (धर्म, अधर्म, आकाश और काल) क्रियासहित नहीं (होते हैं) । पुद्गल के निमित्त से जीव क्रियासहित (होते हैं) । और काल के निमित्त से (पुद्गल) स्कन्ध क्रियावान (होते हैं) ।

14. एदे छद्दव्वाणि य, कालं मौत्तूण अत्थिकायत्ति ।
णिदिदट्ठा जिणसमये, काया हु बहुप्पदेसत्तं ॥

15- संखेज्जासंखेज्जा-णंतपदेसा हवंति मुत्तस्स ।

16. धम्माधम्मस्स पुणो, जीवस्स असंखदेसा हु ॥
लोयायासे ताव, इदरस्स अणंतयं हवे देसा ।
कालस्स ण कायत्तं, एगपदेसो हवे-जम्हा ॥

17. आगासमणुणिविट्ठं आगासपदेससण्णया भणिदं ।
सव्वेसिं च अणूणं सवकदि तं देदुमवकासं ॥

18. जस्स ण संति पदेसा पदेसमेत्तं व तच्चदो णादु ।
सुण्णं जाण तमत्थं अत्थंतरभूदमत्थीदो ॥

19. अण्णोण्णं पविसंता दिता ओगासमण्णमण्णस्स ।
मेलंता वि य णिच्चं सगं सभावं ए विजहंति ॥

20. जीवोत्ति हवदि चेदा उपओगविसेसिदो प्हू कत्ता ।
भोत्ता य देहमत्तो ण हि मुत्तो कम्मसंजुतो ॥

21. पाणेहि चटुहि जीवदि जीवस्सदि जो हु जीविदो पुव्वं ।
सो जीवो पाणा पुण बलमिदियमाउ उस्सासो ॥

- 14 जिन-सिद्धान्त में ये छ द्रव्य (हैं) । (उनमें से) काल को छोड़कर (शेष) अस्तिकाय कहे गये (हैं) । (जो) बहुप्रदेशपना (है), (वह) ही 'काय' (समझा जाना चाहिए) ।
- 15-16 मूर्त (पुद्गल) (द्रव्य) के सख्येय, असख्येय तथा अनन्त प्रदेश होते हैं । धर्म के, अधर्म के तथा जीव के असख्य प्रदेश (होते हैं) । लोकाकाश में (भी) इतने ही प्रदेश (हैं), विरोधी (अलोकाकाश) में अनन्त प्रदेश होते हैं । काल के कायता नहीं है, क्योंकि (उसके) एकप्रदेश (ही) होता है ।
- 17 ('प्रदेश' की धारणा को समझाने के लिए कहा गया है कि) (जहाँ) आकाश में (एक) अणु स्थित कहा गया (है), (वहाँ) आकाश का एक प्रदेश (है) । (वह उतना आकाश) (प्रदेश) नाम के द्वारा (कहा जाता है) । वह (आकाश का एक प्रदेश) सभी अणुओं को स्थान देने के लिए समर्थ होता है ।
- 18 जिसके प्रदेश नहीं है (या) (जिसके) वस्तुतः प्रदेश मात्र भी जानने के लिए (वर्तमान नहीं है), वह द्रव्य अस्तित्व से विपरीत हुआ है, (इसलिए) (तुम) (उसको) शून्य समझो ।
- 19 यद्यपि (सभी) (द्रव्य) एक दूसरे में प्रवेश करते हुए (स्थित हैं), एक दूसरे को स्थान देते हुए (विद्यमान हैं), तथा (एक दूसरे से) सदैव सम्पर्क करते हुए (रहते हैं) (तो) (भी) (वे) निज स्वभाव को नहीं छोड़ते हैं ।
- 20 जीव चेतनामय होता है, (वह) ज्ञान-गुण की विशेषता लिए हुए (रहता है), (अपने विकास में) समर्थ (होता है), (शुभ-अशुभ क्रियाओं का) कर्त्ता तथा (सुख-दुःख का) भोक्ता (होता है), देह जितना (रहता है), इन्द्रियो द्वारा उसका कभी भी ग्रहण नहीं (होता है) तथा (वह) (शुभ-अशुभ) कर्मों से युक्त (रहता है) ।
- 21 जो निस्सन्देह चार प्राणों से जीता है, जीवेगा, तथा विगत काल में जिया (है), वह जीव (कहा गया है) । और (वे) चार प्राण (हैं)- बल, इन्द्रिय, आयु और श्वास (साँस) ।

22 जीवा संसारत्था णिव्वादा चेदणप्पगा डुविहा ।
उवओगलक्खणा वि य देहादेहप्पवीचारा ॥

23 एदे सव्वे भावा, ववहारणयं पडुच्च भणिदा हु ।
सव्वे सिद्धसहावा, सुद्धणया संसिदी जीवा ॥

24. अप्पा परिणामप्पा परिणामो णाणकम्मफलभावी ।
तम्हा णाणं कम्मं फलं च आदा मुणेदव्वो ॥

25. कम्माणं फलमेक्को एक्को कज्जं तु णाणमध एक्को ।
चेदयदि जीवरासी चेदगभावेण तिविहेण ॥

26. परिणमदि चेयणाए आदा पुण चेदणा तिधाभिमदा ।
सा पुण णाणे कम्मे फलम्मि वा कम्मणो भणिदा ॥

27 णाणं अत्थवियप्पो कम्मं जीवेण जं समारद्धं ।
तमरणेगविधं भणिदं फलत्ति सोक्खं व दुक्खं वा ॥

- 22 जीव दो प्रकार के (हैं)– ससार (मानसिक तनाव) में स्थित और ससार (मानसिक तनाव) से मुक्त । (वे) (सभी) चेतना-स्वरूपवाले और ज्ञान-स्वभाववाले (होते हैं) । तथा (वे) देहसहित और देहरहित भेदवाले भी (कहे गये हैं) ।
- 23 (ससारी जीवों के) ये सभी भाव (जन्म-मरणादि) व्यवहारनय को अपेक्षा करके कहे गये (हैं) । सचमुच शुद्धनय से ससार-चक्र (ग्रहण किए हुए) सभी जीव सिद्धस्वरूप (लिए हुए होते हैं) ।
- 24 आत्मा परिणाम-स्वभाववाला (कहा गया है) । परिणाम ज्ञान–(चेतना), प्रयोजन–(चेतना) तथा (कर्म)–फल–(चेतना) के रूप में होनेवाला (बताया गया है) । इसलिए (जहाँ) ज्ञान–(चेतना) प्रयोजन–(चेतना) व (कर्म)–फल–(चेतना) है, वहाँ आत्मा समझी जानी चाहिए ।
- 25 कुछ जीव कर्म के (सुख-दुःखात्मक) फल को, कुछ (शुभ-अशुभ) प्रयोजन को तथा कुछ ज्ञान को (अनुभव करते हैं) । (इस प्रकार) जीव-समूह तीन प्रकार के सचेतन परिणामन से (ज्ञान, प्रयोजन और कर्म-फल को) अनुभव करता है ।
26. आत्मा चेतनारूप में रूपान्तरित होती है, तथा चेतना तीन प्रकार से (रूपान्तरित) मानी गई है । फिर वह (चेतना) ज्ञान में, प्रयोजन में, तथा कर्म के फल में (रूपान्तरित) कही गई (है) ।
27. पदार्थ का विचार (जानना) ज्ञान–(चेतना) (है) । जीव के द्वारा जो (शुभ-अशुभ प्रयोजन) धारा गया (है), वह कर्म–(चेतना) (है) । वह (प्रयोजन-चेतना) अनेक प्रकार की कही गई (है) । तथा (जो) सुख अथवा दुःख (अनुभव होता है), (वह) (कर्म)–फल–(चेतना) (है) ।

28. सव्वे खलु कम्मफलं थावरकाया तसा हि कज्जजुदं ।
पाणित्तमदिवक्कंता णाणं विदति ते जीवा ॥

29 एदे जीवणिकाया पंचविहा पुढविकाइयादीया ।
मणपरिणामविरहिदा जीवा एगेंदिया भणिया ॥

30. अंडेसु पवड्ढंता गबभत्था माणुसा य मुच्छगया ।
जारिसया तारिसया जीवा एगेंदिया णेया ॥

31. संवुक्कमाडुवाहा संखा सिप्पी अपादगा य किमी ।
जाणति रस फासं जे ते बेइंदिया जीवाः ॥

32. जूगागुभीमक्कणपिपीलिया विच्छियादिया कीडा ।
जाणंति रसं फासं गंधं तेइंदिया जीवा ॥

33 उहंसमसयमक्खियमधुकरभमरा पतगमादीया ।
रूपं रसं च गंधं फासं पुण ते विजाणंति ॥

34. सुरणरणारयतिरिया वण्णरसप्फासगंधसद्दण्हू ।
जलचरथलचरखचरा बलिया पचेदिया जीवा ॥

28 वे सभी जीव (जो) स्थावरकाय* (हैं) कर्म के (सुख-दुःखात्मक) फल को अनुभव करते हैं । (वे) (सभी) (जीव) (जो) त्रस** (हैं) (शुभ-अशुभ) प्रयोजन से मिली हुई (चेतना) को (अनुभव करते हैं) (तथा) (वे) (सभी) (जीव) (जो) प्राणित्व को पार किए हुए (हैं), ज्ञान का (अनुभव करते हैं) ।

* पृथ्वीकायिक, जलकायिक तथा वनस्पतिकायिक जीव (पञ्चास्तिकाय, 111)

** अग्निकायिक तथा वायुकायिक (एकेन्द्रिय जीव), द्वि-इन्द्रिय से पचेन्द्रिय तक के जीव (पञ्चास्तिकाय, 112-117)

29 ये पृथिवीकायिकादि पाँच प्रकार के जीवसमूह मन के प्रभाव से रहित (होते हैं) । (ये) जीव एक इन्द्रियवाले कहे गये (हैं) ।

30. जिस प्रकार अण्डो में बढ़ते हुए जीव (होते हैं) एवं गर्भ में स्थित तथा वेहोश मनुष्य (होते हैं), उसी प्रकार एक (स्पर्शन) इन्द्रियवाले जीव समझे जाने चाहिए ।

31 शवूक, मातृवाह (क्षुद्र जन्तु विशेष), शङ्ख, सीप और विना पैरवाले कीट जो स्पर्श और रस को जानते हैं, वे दो इन्द्रियवाले जीव (हैं) ।

32 जूँ, कुम्भी (एक प्रकार का जहरीला कीट), खटमल, चीटी, विच्छू आदि कीड़े तीन इन्द्रियवाले जीव (हैं) । (वे) स्पर्श, रस और गन्ध को जानते हैं ।

33 मच्छर, डास, मक्खी, मधुमक्खी, भौरा, पतंगा आदि (जीव) स्पर्श, रस, गन्ध और रूप को जानते हैं । अतः वे (चार इन्द्रियवाले जीव हैं) ।

34 देव, मनुष्य, नारकी और तिर्यञ्च वर्ण, रस, स्पर्श, गन्ध और शब्द के जाननेवाले (होते हैं) । (ये) पचेन्द्रिय गतिशील जीव जल में गमन करनेवाले, स्थल पर गमन करनेवाले और आकाश में गमन करनेवाले होते हैं ।

35. जह पउमरायरयणं खित्तं खीरं पभासयदि खीरं ।
तह देही देहत्थो सदेहमत्तं पभासयदि ॥

36-37-38.

जो खलु संसारत्थो जीवो तत्तो दु होदि परिणामो ।
परिणामादो कम्मं कम्मादो होदि गदिसु गदी ॥
गदिमधिगदस्स देहो देहादो इंदियाणि जायंते ।
तेहिं दु विसयग्गहणं तत्तो रागो वा दोसो वा ॥
जायदि जीवस्सेवं भावो संसारचक्कवालम्मि ।
इदि जिणवरेहिं भणिदो अणादिणिधणो सणिधणो वा ॥

39 जेसिं विसयेसु रदी तेसिं दुक्ख वियाण सब्भावं ।
जदि तं ण हि सब्भावं वावारो णत्थि विसयत्थं ॥

40. तिपयारो सो अप्पा पराब्भतरबाहिरो हु हेऊण ।
तत्थ परो भाइज्जइ अंतोवायेण चयहि बहिरप्पा ॥

41 अक्खाणि बाहिरप्पा अंतरअप्पा हु अप्पसंकप्पो ।
कम्मकलंकविमुक्को परमप्पा भण्णाए देवो ॥

35 जिस प्रकार दूध में डाला हुआ पदाराग रत्न दूध को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार देह में स्थित आत्मा स्वदेहमात्र को प्रकाशित करता है ।

36-37-38

जो जीव सचमुच ससार (मानसिक तनाव) में स्थित (होता है), (उसमें) उस कारण से ही (अशुद्ध) भाव (समूह) उत्पन्न होता है । (अशुद्ध) भाव (समूह) से कर्म (उत्पन्न होता है) और कर्म से गतियों में गमन होता है ।

(किसी भी) गति में गये हुए जीव से देह (उत्पन्न होता है), देह से इन्द्रियाँ उत्पन्न होती हैं । उनके (इन्द्रियों के) द्वारा ही विषयो का ग्रहण (होता है) । (और) उस कारण से (जीव में) राग और द्वेष (उत्पन्न होता है) ।

इस प्रकार जीव के आवागमन के समय (उसमें) मनोभाव (समूह) उत्पन्न होता है (जो) या (तो) आदि और अन्तरहित (होता है) या अन्त-सहित होता है । यह अर्हन्तो द्वारा कहा गया है ।

39 जिन (व्यक्तियों) के (जीवन में) (इन्द्रिय) विषयो में रस है, उनके (जीवन में) दुःख (मानसिक तनाव) (एक) वास्तविकता (है) । (इस बात को) (तुम) समझो, क्योंकि यदि वह (दुःख) वास्तविकता न (होता), (तो) (इन्द्रिय) विषयो के लिए प्रवृत्ति (बार-बार) न (होती) ।

40 निस्सन्देह (भिन्न-भिन्न) कारणों से वह आत्मा तीन प्रकार का है—परम (आत्मा), आन्तरिक (आत्मा) और बहिर (आत्मा) । (तुम) बहिरात्मा को छोड़ो, (चूँकि) उस (परम) अवस्था में आन्तरिक (आत्मा) के साधन से परम (आत्मा) ध्याया जाता है ।

41 (जो व्यक्ति यह मानता है कि) इन्द्रियाँ (ही) (परम सत्य हैं), (वह) बहिरात्मा (है), (जिस व्यक्ति में) (शरीर से भिन्न) आत्मा की विचारणा बिना किसी सन्देह के है, (वह) अन्तरात्मा (है) (तथा) कर्म-कलक से मुक्त (जीव) परम आत्मा (है) । (परम आत्मा) (ही) देव कहा गया (है) ।

- 42 आरुह्वि अंतरप्पा बहिरप्पा छंडिऊण तिविहेण ।
भाइज्जइ परमप्पा उवइट्ठं जिणवरिदेहि ॥
43. जो पस्सदि अप्पाणं अबद्धपुट्ठं अराण्णायं णियदं ।
अविसेसमसंजुत्तं तं सुद्धणयं वियाणाहि ॥
44. अरसमरूवमगंधं अव्वत्तं चेयणागुणमसद्दं ।
जाणमलिगगहणं जीवमणिद्विट्ठसंठाणं ॥
45. ववहारोऽभूदत्थो भूदत्थो देसिदो दु सुद्धणओ ।
भूदत्थ मस्सिदो खलु सम्मादिट्ठी हवदि जीवो ॥
- 46 जीवे कम्मं बद्धं पुट्ठं चेदि ववहारणयभणिदं ।
सुद्धणयस्स दु जीवे अबद्धपुट्ठं हवदि कम्मं ॥
47. कम्मं बद्धमबद्धं जीवे एदं तु जाण णयपक्खं ।
णयपक्खातिक्कंतो भण्णदि जो सो समयसारो ॥
- 48 जीवो ववगदमोहो उवलद्धो तच्चमप्पणो सम्मं ।
जहदि जदि रागदोसे सो अप्पाणं लहदि सुद्धं ॥

42. अरहतो द्वारा (यह) कहा गया (है) कि (साधको द्वारा) तीन प्रकार (मन, वचन, काय) से बहिरात्मा को छोड़कर और अन्तरात्मा को ग्रहण करके परमात्मा (परम आत्मा) ध्याया जाता है ।
43. जो (नय) आत्मा को स्थायी, अद्वितीय, (कर्मों के) बन्ध से रहित (रागादि से) न छुआ हुआ, (अतरंग) भेद से रहित, (तथा) (अन्य से) अमिश्रित देखता है, उसको (तुम) शुद्धनय जानो ।
44. आत्मा रसरहित, रूपरहित, गंधरहित, शब्दरहित तथा अदृश्यमान (है), (उसका) स्वभाव चेतना तथा ज्ञान (है), (उसका) ग्रहण बिना किसी चिह्न के (केवल अनुभव से) (होता है) (और) (उसका) आकार अप्रतिपादित (है) ।
45. (जीवन में महत्वपूर्ण होते हुए भी) व्यवहार (नय) अवास्तविक है (और) (आध्यात्म मार्ग में) शुद्धनय ही वास्तविक कहा गया (है) । वास्तविकता पर आश्रित जीव ही सम्यग्दृष्टि होता है ।
46. जीव के द्वारा कर्म बाधा हुआ (है) और पकड़ा हुआ (है)—इस प्रकार (यह) व्यवहारनय के द्वारा कहा गया है, किन्तु शुद्धनय के (अनुसार) जीव के द्वारा कर्म न बाधा हुआ (और) न पकड़ा हुआ होता है ।
47. जीव के द्वारा कर्म बाधा गया (है) और नहीं बाधा गया (है)—इसको तो तुम नय की दृष्टि जानो, किन्तु जो नय की दृष्टि से अतीत (है), वह समयसार (शुद्धात्मा) कहा गया (है) ।
48. (जिस व्यक्ति के द्वारा) मोह (आध्यात्मिक विस्मरण) समाप्त किया गया (है), (उस) व्यक्ति ने पूर्णतः आत्मा के सार को प्राप्त किया (है) । यदि वह राग-द्वेष (आसक्ति) को छोड़ देता है, (तो) (वह) अपने शुद्ध स्वरूप को प्राप्त कर लेगा ।

49. जो एवं जाणित्ता भादि परं अप्पगं विसुद्धप्पा ।
सागाराणागारो खवेदि सो मोहदुग्गांठ ॥

50. एाहं होमि परेसि ण मे परे सन्ति णाणमहमेवको ।
इदि जो भायदि भाणे सो अप्पाणं हवदि भादा ॥

51. देहा वा दविणा वा सुहदुक्खा वाऽध सत्तुमित्तजणा ।
जीवस्स ण संति धुवा धुवोवओगप्पगो अप्पा ॥

52. एवं एाणप्पाणं दंसणभूदं अदिदियमहत्थं ।
धुवमचलमणालंबं मण्णेऽहं अप्पगं सुद्धं ॥

53. आदा एाणपमाणं एाणं णेयप्पमाणमुद्दिट्ठं ।
णेय लोगालोगं तम्हा एाणं तु सच्चवगयं ॥

54. एाणं अप्पत्ति मदं वट्ठदि एाणं विणा एा अप्पाणं ।
तम्हा एाणं अप्पा अप्पा एाणं व अप्पणं वा ॥

55. जो जाणदि सो णाणं ण हवदि णारणेण जाणगो आदा ।
एाणं परिणमदि सयं अट्ठा एाणट्ठिया सच्चे ॥

56. तिवकालणिच्चविसमं सयलं सच्चत्थ संभवं चित्तं ।
जुगवं जाणदि जोण्हं अहो हि एाणस्स माहप्पं ॥

- 49 जो गृहस्थ (तथा) मुनि इस प्रकार समझकर उच्चतम आत्मा का ध्यान करता है, वह मोह की जटिल गाँठ को नष्ट कर देता है (और) (वह) शुद्धात्मा (हो जाता है) ।
- 50 मैं पर (द्रव्यो) के (अधीन) नहीं हूँ । पर (द्रव्य) मेरे (अधीन) नहीं है । मैं (तो) केवल मात्र ज्ञान (हूँ) । इस प्रकार जो ध्यान में आत्मा को ध्याता है, वह (वास्तविक) ध्याता होता है ।
- 51 अच्छा तो, (यह समझा जाना चाहिए कि) व्यक्ति के (जीवन में) (स्थूल एवं सूक्ष्म) शरीर, धनादि वस्तुएँ, सुख और दुःख, शत्रुजन एवं मित्रजन स्थायी नहीं रहते हैं । (केवल) उपयोगमयी (चेतना-ज्ञान स्वभाववाली) आत्मा (ही) स्थायी (होती है) ।
- 52 इस प्रकार मैं (कुन्दकुन्द) आत्मा को ज्ञानस्वभाववाला, दर्शनमयी, अतीन्द्रिय, श्रेष्ठ पदार्थ, स्थायी, स्थिर, आलवनरहित तथा शुद्ध समझता हूँ ।
- 53 आत्मा ज्ञान जितना (है) । ज्ञान ज्ञेय (जानने योग्य पदार्थ) जितना कहा गया (है) । ज्ञेय (जानने योग्य पदार्थ) लोक और अलोक (है) । इसलिए ज्ञान तो सब जगह विद्यमान (रहता है) ।
- 54 आत्मा ज्ञान (है) । आत्मा के बिना ज्ञान नहीं होता है । इस प्रकार (यह) (जिनमत में) स्वीकृत (है) । इसलिए आत्मा ज्ञान (है), ज्ञान आत्मा (है) तथा (आत्मा) अन्य गुणरूप भी (होता है) ।
- 55 जो जानता है, वह ज्ञान (है) । ज्ञान के द्वारा आत्मा जाननेवाला नहीं होता है । (जानने में) ज्ञान स्वयं रूपान्तरित होता है । सब पदार्थ ज्ञान में स्थित (रहते हैं) ।
- 56 (केवल ज्ञान का) प्रकाश तीनों कालों में अविनाशी तथा अनुपम (होता है) । (वह) सम्पूर्ण (लोक) को तथा (उसकी) विविध सभावनाओं को हर समय एक साथ जानता है । हे मनुष्यो ! निश्चयपूर्वक (यह) (केवल) ज्ञान की महिमा (है) ।

57. एतिय परोक्खं किंचिवि समंत सव्वक्खगुणसमिद्धस्स ।
अक्खत्तीदस्स सदा सयमेव हि एाणजादस्स ॥

58. गेण्हदि णेव ए मुच्चदि ए परं परिणमदि केवली भगवं ।
पेच्छदि समतदो सो जाणदि सव्वं णिखसेसं ॥

59. सोक्खं वा पुण दुक्खं केवलणाणिस्स एतिय देहगदं ।
जम्हा अदिदियत्तं जादं तम्हा दु तं णेयं ॥

60. अतिय अमुत्तं मुत्तं अदिदियं इंदिय च अत्येसु ।
एाणं च तथा सोक्खं जं तेसु परं च तं णेयं ॥

61. जं केवलत्ति एाण तं सोक्खं परिणमं च सो चेव ।
खेदो तस्स ए भणिदो जम्हा घादी खयं जादा ॥

62. जादं सयं समत्तं एाणमणंतत्थवित्थिदं विमलं ।
रहिदं तु उग्गहादिहि सुहत्ति एयंतियं भणिदं ॥

63. जादो सयं स चेदा सव्वण्हू सव्वलोगदरसी य ।
पप्पोदि सुहमणंतं अवावाधं सगममुत्तं ॥

- 57 निस्सन्देह स्वयं ही (केवल/दिव्य) ज्ञान को प्राप्त (व्यक्ति) के लिए सदा इन्द्रियो (की अधीनता) से परे पहुँचे हुए ज्ञान के लिए, सब ओर से सब इन्द्रियो के गुणों में (एक साथ) सम्पन्न व्यक्ति के लिए कुछ भी परोक्ष नहीं है ।
- 58 केवली भगवान् पर (वस्तु) को न ग्रहण करते हैं (और) न ही छोड़ते हैं । वे सब ओर से (तथा) पूर्णरूप से सब को जानते हैं । (किन्तु) (इस कारण से) (वे) (स्वयं) रूपान्तरित नहीं होते हैं ।
59. चूँकि केवलज्ञानी (शुद्धोपयोगी) के अतीन्द्रियता उत्पन्न हुई (है), इसलिए ही (उसके जीवन में) शरीर के द्वारा प्राप्त सुख अथवा दुःख (विद्यमान) नहीं (होता है) । वह (बात) (वास्तव में) समझने योग्य (है) ।
- 60 पदार्थों के विषय में अतीन्द्रिय ज्ञान मूर्च्छारहित (होता है) तथा इन्द्रिय-ज्ञान मूर्च्छा-युक्त (होता है) और इसी तरह (अतीन्द्रिय-इन्द्रिय) सुख (भी) (क्रमण) (मूर्च्छारहित तथा मूर्च्छायुक्त) (होता है) ।
- 61 जो केवलज्ञान (दिव्यज्ञान) (है), वह सुख (है) । (और) निस्सन्देह (केवलज्ञान के रूप में) वह रूपान्तरण (सुख) ही है । उसके (केवलज्ञानी के/शुद्धोपयोगी के) (जीवन में) खेद (मानसिक तनाव) नहीं कहा गया (है), चूँकि (उसके) धातियाँ (मानसिक तनाव उत्पन्न करनेवाले) (कर्म) क्षय को प्राप्त हुए (हैं) ।
- 62 जो ज्ञान पूर्ण (है), शुद्ध (है), आप से आप उत्पन्न हुआ (है), अनन्त पदार्थों में फैला हुआ (है) और अवग्रह आदि (की सीमाओं) से रहित है, (वह) अद्वितीय सुख कहा गया (है) ।
- 63 हे मनुष्य ! (तू समझ कि) जो व्यक्ति स्वयं जिन (हुआ है) और सब लोक को (तथ्यात्मक और मूल्यात्मक रूप से) देखनेवाला (भी) हुआ (है), वह अनन्त, बाधरहित, निजी (आत्मा से उत्पन्न) (तथा) इन्द्रियातीत सुख को प्राप्त करता है ।

64. तिमिरहरा जइ दिट्ठी जरास्स दीवेण णत्थि कादव्वं ।
तथ सोक्खं सयमादा विसया किं तत्थ कुव्वंति ॥

65. सयमेव जधादिच्चो तेजो उण्हो य देवदा णभसि ।
सिद्धोवि तथा णाणं सुहं च लोगे तथा देवो ॥

66. परिणमदि जदा अप्पा सुहम्मि असुहम्मि रागदोसजुदो ।
तं पविसदि कम्मरयं णाणावरणादिभार्वेहि ॥

67. जं कुणदि भावमादा कत्ता सो होदि तस्स भावस्स ।
कम्मत्तं परिणमदे तम्हि सयं पोग्गलं दव्वं ॥

68. अण्णाणी पुण रत्तो हि सव्वदव्वेसु कम्ममज्झगदो ।
लिप्पदि कम्मरयेण दु कद्दममज्झे जहा लोहं ।

69. आदा कम्ममलिमसो धारदि पाणे पुणो पुणो अण्णे ।
ण जहदि जाव ममत्तं देहपधानेसु विसएसु ॥

70. वत्थु पडुच्च तं पुण अज्झवसाणं तु होदि जीवाणं ।
ए हि वत्थुदो दु बंधो अज्झवसाणेण बंधो त्ति ॥

- 64 यदि मनुष्य की आँख (स्वयं) (वस्तुओं के प्रति) अन्वेषण को हटाने वाली (है), (तो) दीपक के द्वारा (कुछ भी) किये जाने योग्य नहीं (रहता है) । उसी प्रकार (जब) स्वयं आत्मा ही सुख (है), (तो) वहाँ पर (इन्द्रियों के) विषय क्या प्रयोजन (सिद्ध) करेंगे ?
- 65 जिस प्रकार सूर्य स्वयं ही प्रकाश (है), उष्ण (है), तथा आकाश में (एक) दिव्यशक्ति (है), उसी प्रकार सिद्ध (पूर्ण आत्मा) भी ज्ञान और सुख (है) तथा लोक में दिव्य (होते हैं) ।
- 66 जब आत्मा राग-द्वेष से जकड़ा हुआ शुभ और अशुभ (भाव) में रूपान्तरित होता है, (तो) ज्ञानावरणादिरूप परिणामों द्वारा कर्म-रज उसमें (आत्मा में) प्रवेश करता है ।
- 67 आत्मा जिस भाव को उत्पन्न करता है, वह उस भाव का कर्ता होता है । उसके (कर्ता) होने पर पुद्गल द्रव्य अपने आप कर्मत्व को प्राप्त करता है ।
68. और निस्सन्देह अज्ञानी सब वस्तुओं में आसक्त (होता) है । अतः कर्म के मध्य में फँसा हुआ कर्मरूपी रज से मलिन किया जाता है, जिस प्रकार कीचड़ में (पड़ा हुआ) लोहा (मलिन किया जाता है) ।
- 69 जब तक (आत्मा) (उन) (इन्द्रिय)-विषयों में (जिनके) मूल में शरीर (रहता है) ममत्व को नहीं छोड़ती है, (तब तक) आत्मा कर्मों से मलिन (रहती है) और बार-बार नवीन प्राणों को धारण करती है ।
- 70 फिर वस्तु को आश्रय करके निस्सन्देह जीवों के (आसक्तिपूर्ण) विचार होता है, तो भी वास्तव में वस्तु से बंध नहीं (होता है) । अतः (आसक्तिपूर्ण) विचार से ही बन्ध (होता है) ।

71. रत्तो बंधदि कम्मं मुच्चदि कम्मेहि रागरहिदप्पा ।
एसो बंधसमासो जीवाणं जाण णिच्छयदो ॥

72. जो इंदियादिविजई भवीय उवओगमप्पगं भादि ।
कम्मेहि सो ण रंजदि किह तं पाणा अणुचरंति ॥

73. परिणमदि णेयमट्ठं णादा जदि णेव खाइगं तस्स ।
णाणंति तं जिणदा खवयंतं कम्ममेवुत्ता ॥

74. जं भावं सुहमसुहं करेदि आदा स तस्स खलु कत्ता ।
तं तस्स होदि कम्मं सो तस्स दु वेदगो अप्पा ॥

75. जं कुणदि भावमादा कत्ता सो होदि तस्स कम्मस्स ।
णाणिस्स दु णाणमओ अण्णाणमओ अणाणिस्स ॥

76-77.

कणयमया भावादो जायंते कुडलादयो भावा ।
अयमयया भावादो जह जायंते दु कडयादी ॥
अण्णाणमया भावा अणाणिणो बहुविहा वि जायंते ।
णाणिस्स दु णाणमया सव्वे भावा तहा होंति ।

78. णिच्छयणयस्स एवं आदा अप्पाणमेव हि करेदि ।
वेदयदि पुणो तं चेव जाण अत्ता दु अत्ताणं ॥

- 71 आसक्त (व्यक्ति) कर्मों को बाँधता है, आसक्ति से रहित व्यक्ति कर्मों से छुटकारा पा जाता है। निस्सन्देह यह जीवों के (कर्म) बंध का संक्षेप है। (तुम) (इसे) समझो।
- 72 जो (व्यक्ति) इन्द्रियादि का विजेता होकर उपयोगमयी (ज्ञानमयी) आत्मा को ध्याता है, वह कर्मों के द्वारा नहीं रगा जाता है। (तो) प्राण उसका अनुसरण कैसे करेंगे ?
- 73 यदि ज्ञाता ज्ञेय (जानने योग्य पदार्थ) में कभी रूपान्तरित नहीं होता है, (तो) उसका ज्ञान कर्मों के क्षय से उत्पन्न (समझा जाना चाहिए)। इसलिए जिनेन्द्रो ने उसे ही कर्मों को क्षय करता हुआ (व्यक्ति) कहा (है)।
- 74 आत्मा जिस शुभ-अशुभ भाव को करता है, वह उसका निस्संदेह कर्ता होता है, वह (भाव) उसका कर्म होता है, (तथा) वह आत्मा ही उसका भोक्ता होता है।
- 75 आत्मा जिस भाव को (अपने में) उत्पन्न करता है, वह उस (भाव) कर्म का कर्ता होता है। ज्ञानी का (यह भाव) ज्ञानमय (होता है) और अज्ञानी का (यह भाव) अज्ञानमय होता है।

76-77

जैसे कनकमय वस्तु से कुण्डल आदि वस्तुएँ उत्पन्न होती हैं (बनती हैं) और लोहमय वस्तु से कड़े आदि उत्पन्न होते हैं (बनते हैं), वैसे ही अज्ञानी के अनेक प्रकार के अज्ञानमय भाव ही उत्पन्न होते हैं तथा ज्ञानी के सभी भाव ज्ञानमय होते हैं।

- 78 निश्चयनय के (अनुसार) इस प्रकार (कहा गया है कि) आत्मा आत्मा (अपने भावों) को ही करता है तथा आत्मा आत्मा (अपने भावों) को ही भोगता है, उसको ही (तुम) जानो।

79. ववहारस्स दु आदा पोगलकम्मं करेदि णेयविहं ।
तं चेव य वेदयदे पोगलकम्मं अणेयविहं ॥
80. अप्पा उवओगप्पा उवओगो णाणदंसणं भणिदो ।
सो हि सुहो असुहो वा उवओगो अप्पणो हवदि ॥
81. जदि सो सुहो व असुहो ण हवदि आदा सयं सहावेण ।
संसारोवि ण विज्जदि सव्वेसि जीवकायाणं ॥
82. देवदजदिगुरुपूजासु चेव दाणम्मि वा सुसीलेसु ।
उववासादिसु रत्तो सुहोवओगप्पणो अप्पा ॥
83. सुहपरिणामो पुण्णं असुहो पावंति हवदि जीवस्स ।
दोण्हं पोगलमेत्तो भावो कम्मत्तणं पत्तो ॥
84. रागो जस्स पसत्थो अणुकंपाससिदो य परिणामो ।
चित्तम्हि णत्थि कलुसं पुण्णं जीवस्स आसवदि ॥
85. अरहंतसिद्धसाहुसु भत्ती धम्मम्मि जा य खलु चेट्ठा ।
अणुगमणं पि गुरुणं पसत्थरागो त्ति वुच्चंति ॥
86. तिसिदं बुभुक्खिदं वा दुहिदं दट्ठूण जो दु दुहिदमणो ।
पडिवज्जदि तं किवया तस्सेसा होदि अणुकंपा ॥

- 79 किन्तु व्यवहारनय के (अनुसार) आत्मा अनेक प्रकार के पुद्गल कर्मों को करता है (तथा) उस अनेक प्रकार के पुद्गल कर्म को ही भागता है ।
- 80 आत्मा उपयोग-स्वभाववाला (है) । उपयोग ज्ञान-दर्शन कहा गया (है) और आत्मा का वह उपयोग शुभ अथवा अशुभ होता है ।
- 81 यदि वह आत्मा स्वयं अपने भाव (स्व-संकल्प) से शुभ रूप अथवा अशुभ रूप नहीं होवे, (तो) किसी भी जीव के ससार (मानसिक तनाव/अशांति) ही न होवे ।
- 82 देव, साधु (तथा) गुरु की भक्ति में, दान में, शीलो (व्रतो) में तथा उपवास आदि में सलग्न आत्मा शुभोपयोगवाला (कहा जाता है) ।
83. जीव का शुभ परिणाम पुण्य होता है और (उसका) अशुभ (परिणाम) पाप (होता है) । दोनों कारणों से भाव ने कर्मत्व को प्राप्त किया (है) । (यह) (कर्मत्व) पुद्गल की राशि (है) ।
- 84 जिसके (जीवन में) शुभ राग (होता है) (और) अनुकंपा पर आश्रित भाव (होता है) तथा (जिसके) मन में मलिनता नहीं (होती है), (उस) जीव के (जीवन में) पुण्य का आगमन होता है ।
- 85 अरहतों, सिद्धों और साधुओं की (जो) भक्ति (है) तथा धर्म (नैतिक-आध्यात्मिक मूल्यों) में जो प्रवृत्ति (है) एवं पूज्य व्यक्तियों का जो अनुसरण (है), (वे) (सब) शुभ राग (है) । (आचार्यों द्वारा) शुभ राग के अन्तर्गत (ये) (बात) कही जाती है ।
- 86 भूखे, प्यासे अथवा (किसी) दुःखी (प्राणी) को देखकर जो भी कोई दुःखी मनवाला (होकर) उसके प्रति दयालुता से व्यवहार करता है, उसके यह अनुकंपा होती है ।

87. कोधो व जदा माणो माया लोभो व चित्तमासैज्ज ।
जीवस्स कुणदि खोहं कलुसो त्ति य तं बुधा वेत्ति ॥
88. चरिया पमादवहुला कालुस्सं लोलदा य विसयेमु ।
परपरितावपवादो पावस्स य आसवं कुणदि ॥
89. सण्णाओ य तिलेस्सा इंदियवमदा य अत्तरुद्दाणि ।
णाणं च दुप्पउत्त मोहो पावप्पदा होत्ति ॥
90. भावं तिविहपयारं सुहासुहं सुद्धमेव णायव्वं ।
असुह च अट्टरुद्धं सुहधम्मं जिणवरिदेहि ॥
91. जो जाणादि जिणिदे पेच्छदि सिद्धे तधेव अणगारे ।
जीवे य साणुकपो उवओगो सो सुहो तस्स ॥
92. विसयकसाओगाढो दुस्सुदिट्ठच्चित्तदुट्ठगोट्टिजुदो ।
उगो उम्मग्गपरो उवओगो जस्स सो असुहो ॥
93. सुद्धं सुद्धसहावं अप्पा अप्पम्मि तं च णायव्वं ।
इदि जिणवरेहि भणियं जं सेयं तं समायरह ॥

- 87 जिस समय क्रोध या मान या माया या लोभ चित्त में घटित होता है, उस समय (वह) जीव के चित्त में व्याकुलता उत्पन्न करता है। (यह) निस्सन्देह मलिनता (है)। ज्ञानी (ऐसा) कहते हैं।
- 88 (कर्तव्य-पालन में) लापरवाहीपूर्वक आचरण, (चित्त की) मलिनता, (इन्द्रिय)-विषयो में लालसा और दूसरे को पीडा देना व (उस पर) कलक लगाना-(यह सब) पाप (कर्म) के आने को प्रोत्साहित करता है।
- 89 (चार) सज्ञाएँ, तीन (अशुभ) लेश्याएँ, (पंच) इन्द्रियो की अधीनता, आर्त्त और रौद्र ध्यान, अनुचित रूप से प्रयोग किया हुआ ज्ञान, मोह (आध्यात्मिक विमुखता)—ये सब पाप के स्थान होते हैं।
- 90 (जो) (आत्मा का) भाव (है) (उसके) तीन प्रकार के भेद (हैं)। (वह भाव) शुभ, अशुभ (तथा) शुद्ध ही समझा जाना चाहिए। अरहतों द्वारा (कहा गया है कि) धर्म (ध्यान) शुभ (है) तथा आर्त्त और रौद्र (ध्यान) अशुभ (है)।
- 91 जो (व्यक्ति) अरहतों को समझता है, सिद्धों को समझता है, उसी प्रकार (जो) साधुओं को (भी) समझता है (तथा) जीवों पर दयावान (होता है), उसका वह उपयोग शुभ (कहा जाता है)।
- 92 जिस (व्यक्ति) का उपयोग विषय-कषायों में डूबा हुआ (है), (जिसका) (उपयोग) दुष्ट सिद्धांत, दुष्ट बुद्धि, (तथा) दुष्ट चर्या से जुड़ा हुआ (है), (जिसका) (उपयोग) क्रूर (है) तथा कुपथ में लीन है, (उसका) वह (उपयोग) अशुभ (है)।
- 93 (जो) (आत्मा का) शुद्ध स्वभाव (है), (वह) शुद्ध भाव (है), वह (शुद्ध भाव) आत्मा के द्वारा आत्मा में ही अनुभव किया जाना चाहिए। [तीनों (शुभ-अशुभ-शुद्ध) में] जो श्रेष्ठ (है), (तुम) उस का आचरण करो। इस प्रकार अरहत द्वारा कहा गया (है)।

94. उवओगो जदि हि सुहो पुण्णं जीवस्स संचयं जादि ।
असुहो वा तध पावं तेसिमभावे ण चयमत्थि ॥
95. अह पुण अप्पा णिच्छदि पुण्णाइं करेदि णिरवसेसाइं ।
तह वि ण पावदि सिद्धिं संसारत्थो पुणो भणिदो ॥
96. वदणियमाणि धरंता सीलाणि तहा तव च कुव्वंता ।
परमदुवाहिरा जे णिव्वाणं ते ण विदंति ॥
97. सुहपरिणामो पुण्णं असुहो पावत्ति भणियमण्णेसु ।
परिणामोणण्णगदो दुक्खक्खयकारणं समये ॥
98. आदसहावा अण्णं सच्चित्ताचित्तमिस्सियं हवइ ।
तं परदव्वं भणियं अवितत्थं सव्वदरसीहि ॥
99. जस्स हिदयेणुमत्तं परदव्वम्हि विज्जदे रागो ।
सो ण विजाणदि समयं सगस्स सव्वागमधरोवि ॥
100. जो सव्वसंगमुक्को णाण्णमणो अप्पणं सहावेण ।
जाणदि पस्सदि णियदं सो सगचरियं चरदि जीवो ॥

- 94 यदि जीव का उपयोग शुभ (होता है), (तो) (जीव) पुण्य संग्रह करता है और (यदि) (उसका) अशुभ (उपयोग होता है), तो उसी तरह (जीव) पाप (संग्रह करता है) । उन (शुभ-अशुभ) के अभाव में (पुण्य-पाप कर्म का) संग्रह नहीं होता है ।
- 95 यदि (मनुष्य) आत्मा को नहीं चाहता है, किन्तु (वह) (केवल) सकल पुण्यो (शुभो) को (ही) करता है, तो भी (वह) परम शांति नहीं पाता है और (वह) ससार (मानसिक तनाव/अशान्ति) में ही स्थित कहा गया (है) ।
- 96 व्रत और नियमों को धारण करते हुए तथा शीलो और तप का पालन करते हुए (भी) जो (व्यक्ति) परमार्थ (शुद्ध आत्म-तत्त्व) से अपरिचित (है), वे परम शान्ति को प्राप्त नहीं करते हैं ।
- 97 पर के प्रति शुभ भाव पुण्य (है), अशुभ (भाव) पाप (है) । इस प्रकार यह कहा गया (है) । पर में न भुका हुआ भाव आगम में दुःख के नाश का कारण (कहा गया है) ।
- 98 आत्म-स्वभाव से अन्य (जो) सचित्त-अचित्त (तथा) मिश्रित (द्रव्य) होता है, वह सर्वज्ञ द्वारा सच्चाईपूर्वक परद्रव्य कहा गया है ।
- 99 जिस (व्यक्ति) के हृदय में परद्रव्य पर अणु के बराबर भी राग (आसक्ति) विद्यमान है, वह समस्त आगमों का धारण करनेवाला (होकर) भी आत्मा के आचरण को नहीं समझता है ।
- 100 जो व्यक्ति सम्पूर्ण आसक्ति से रहित (होता हुआ) (आत्मा में) तल्लीन (होकर) आत्मा को स्वभाव से जानता-देखता है, वह निश्चयात्मक रूप से आत्मा में आचरण करता है ।

101. एवं विदिदत्थो जो दव्वेसु ण रागमेदि दोसं वा ।
उवओगविसुद्धो सो खवेदि देहुव्वभवं दुक्खं ॥

102. अइसयमादसमुत्थं विसयातीदं अणोवममणंतं ।
अव्वुच्छिण्ण च सुहं सुद्धुवओगप्पसिद्धाणं ॥

103. धम्मेण परिणदप्पा अप्पा जदि सुद्धसंपयोगजुदो ।
पावदि णिव्वाणसुहं सुहोवजुत्तो व सग्गसुहं ॥

104. चारित्तं खलु धम्मो धम्मो जो सो समोत्ति णिदिट्ठो ।
मोहक्खोहविहीणो परिणामो अप्पणो हु समो ॥

105. तह सो लद्धसहावो सव्वण्हू सव्वलोगपदिमहिदो ।
भूदो सयमेवादा हवदि सयंभुत्ति णिदिट्ठो ॥

106. उवओगविसुद्धो जो विगदावरणतरायमोहरओ ।
भूदो सयमेवादा जादि पर णेयभूदाण ॥

101. इस प्रकार (जिसके द्वारा) वस्तुस्थिति (शुभ-अशुभ में मानसिक तनाव-आत्मक समानता) जानी गई (है), (और जिसके फलस्वरूप) जो वस्तुओं के प्रति राग-द्वेष (आसक्ति) नहीं करता है, वह उपयोग (चैतन्य) से शुद्ध (रहता है) (तथा) देह से उत्पन्न दुःख को समाप्त कर देता है ।
102. शुद्ध उपयोग (आत्मानुभव) से विभूषित (व्यक्तियों) का सुख श्रेष्ठ, आत्मोत्पन्न, विषयातीत, अनुपम, अनन्त तथा अविच्छिन्न (होता है) ।
103. यदि व्यक्ति शुद्ध (समतारूप) क्रियाओं से युक्त (होता है), (तो) (वह) धर्म (समता) के रूप में रूपान्तरित व्यक्ति (कहा गया है) । (अतः) (वह) परम शान्तिरूपी सुख को प्राप्त करता है । तथा (यदि) (वह) शुभ क्रियाओं से युक्त (होता है), (तो) स्वर्ग सुख को (प्राप्त करता है) ।
104. निस्सन्देह चारित्र्य धर्म (होता है) । जो समता (है), वह निश्चय ही धर्म कहा गया (है) । (समझो) मोह (आध्यात्मिक विस्मरण) और क्षोभ (हर्ष-शोकादि द्वन्द्वात्मक प्रवृत्ति) से रहित आत्मा का भाव ही समता (कहा गया है) । (अतः समता ही चारित्र्य होता है) ।
105. तथा वह व्यक्ति (जिसके द्वारा) स्वयं ही स्वभाव अनुभव कर लिया गया (है), (जो) (स्वयं) (ही) सर्वज्ञ हुआ (है), (जो) लोकाधिपति इन्द्र द्वारा पूजा गया (है), (वह) (वास्तव में) स्वयंभू (स्वयं ही उच्चतम अवस्था पर पहुँचा हुआ) होता है । इस प्रकार (अर्हन्तो) द्वारा कहा गया (है) ।
106. जो व्यक्ति उपयोग (ज्ञानात्मक क्रिया) में शुद्ध (समतारूप) (हुआ है), (उसके द्वारा) (ज्ञान पर) आवरण, (शक्ति प्रकट होने में) बाधा (तथा) मोहरूपी (आध्यात्मिक विस्मरण एवं आसक्तिरूपी) धूल नष्ट कर दी गई (है) । (अतः) (वह) (व्यक्ति) स्वयं ही ज्ञेय पदार्थों को पूर्ण रूप से जान लेता है ।

107. सुविदिदपदत्थसुत्तो सजमतवसजुदो विगदरागो ।
समणो समसुहदुक्खो भणिदो सुद्धोवओगोत्ति ।

108. ठाणणिसैज्जविहारा धम्मवदेसो य णियदयो तेसि ।
अरहताणं काले मायाचारोव्व इत्थीणं ॥

109. सव्वेसि खंधाणं जो अंतो तं वियाण परमाणू ।
सो सस्सदो असदो एक्को अविभाणि मुत्तिभवो ॥

110. आदेशमत्तमुत्तो धादुचदुक्कस्स कारणं जो दु ।
सो एओ परमाणू परिणामगुणो सयमसद्दो ॥

111 सद्दो खंधप्पभवो खंधो परमाणुसंगसंघादो ।
पुट्ठेसु तेसु जायदि सद्दो उप्पादगो णियदो ॥

112. एयरसवण्णगंघं दो फासं सद्दकारणमसद्दं ।
खंधंतरिदं दव्वं परमाणु तं वियाणेहि ॥

- 107 श्रमण (जिसके द्वारा) तत्त्व (अध्यात्म) (तथा) (उसका प्रति-
पादन करनेवाले) सूत्र-(ग्रन्थ) भली प्रकार से जान लिए गये
(है), (जो) सयम और तप से सयुक्त (है), (जिसके द्वारा) राग
समाप्त कर दिया गया (है), जिसके द्वारा सुख और दुःख समान
(समझ लिए गए हैं), (वह) शुद्धोपयोगवाला (समता को प्राप्त)
कहा गया (है) ।
- 108 उन अरहतों के (उस) समय (अरहत अवस्था) में खड़े रहना,
बैठना, गमन करना तथा धर्म (अध्यात्म का उपदेश देना)-(ये
सब क्रियाएँ (लोक कल्याण के लिए) निश्चित रूप से (होती हैं)
जैसे कि स्त्रियों में माताओं का (बालक के कल्याण के लिए)
आचरण (होता है) ।
- 109 जो समस्त पुद्गल-पिण्डों का अन्तिम अंश (है), उसको (तुम)
परमाणु समझो । वह (परमाणु) शाश्वत, शब्दरहित, एक
(प्रदेशीय) (है), (वह) अविभाज्य और भौतिक वस्तुओं का
मूल (है) ।
- 110 (अपने) विवरण से ही (जो) मूल (रूप, रसादि गुणों से युक्त)
है, जो चार मूल तत्वों (पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु) का कारण
(है), परिणमन गुणवाला (है), स्वयं शब्दरहित (है), वह
परमाणु समझा जाना चाहिए ।
- 111 शब्द स्कन्धों से उत्पन्न (होता है) । स्कन्ध परमाणुओं के सगम-
समूह से (उत्पन्न होता है) । उनमें (आपसी) स्पर्श से शब्द उत्पन्न
होता है । (वह) (स्पर्श) (शब्दों को) अवश्य उत्पन्न करने-
वाला (है) ।
- 112 यह द्रव्य (जिसमें) एक रस, (एक) वर्ण, एक गंध तथा दो स्पर्श
समूह (होते हैं), (जो) शब्द का कारण (है), (स्वयं) शब्दरहित
(है) (तथा) (जिसका) स्कन्ध से संबन्ध (रहता है), (वह)
परमाणु है । उसको (तुम सब) समझो ।

- 113 उवभोज्जमिदिएहि य इंदिय काया मणो य कम्माणि ।
जं हवदि मुत्तमणां त सव्वं पुग्गलं जाणे ॥
114. देहो य मणो वाणी पोग्गलदव्वप्पगत्ति णिद्धिद्धा ।
पोग्गलदव्वंपि पुणो पिडो परमाणुदव्व्वाणं ॥
- 115 अपदेसो परमाणू पदेसमेत्तो य सयमसद्दो जो ।
णिद्धो वा लुक्खो वा दुपदेसादित्तमणुहवदि ॥
116. एगुत्तरमेगादी अणुस्स णिद्धत्तरां व लुक्खत्तं ।
परिणामादो भणिदं जाव अणंतत्तमणुहवदि ॥
- 117 णिद्धा वा लुक्खा वा अणुपरिणामा समा व विसमा वा ।
समदो दुराधिगा जदि बज्झंति हि आदिपरिहीणा ॥
118. णिद्धत्तरेण दुगुणो चदुगुणणिद्धेण बंधमणुहवदि ।
लुक्खेण वा तिगुणिदो अणु बज्झदि पंचगुणजुत्तो ॥
119. दुपदेसादि खंधा सुहुमा वा बादरा ससंठाणा ।
पुढविजलतेउवाऊ सगपरिणामेहि जायंते ॥
120. अइथूलथूल थूलं थूलसुहुमं सुहुमथूलं च ।
सुहुमं अइसुहुमं इदि धरादियं होदि छब्भेयं ॥

- 113 इन्द्रियां तथा इन्द्रियो द्वारा भोगे जाने योग्य विषय-शरीर, मन व कर्म (तथा) जो (भी) अन्य भौतिक (वस्तुएँ) है वह सभी पुद्गल है । (तुम) समझो ।
- 114 देह, मन और वाणी—(ये) (सभी) पुद्गल द्रव्य से बने हुए कहे गये (हैं) और पुद्गल द्रव्य भी परमाणु द्रव्यों का पिण्ड है ।
- 115 जो परमाणु एक प्रदेश जितना (होता है), (अन्य) प्रदेशरहित (होता है) तथा स्वयं शब्दरहित (होता है), (वह) स्निग्ध अथवा रुखा (होता है) और (आपस में) मिलकर दो, (तीन) प्रदेश आदिपने को ग्रहण करता है ।
- 116 एक से आरभ करके एक के बाद में अनन्त तक परमाणु के परिणमन (स्वभाव) के कारण (उसके) स्निग्धता और रुक्षता कही गई (है) ।
- 117 परमाणुओं का परिणमन सम (2, 4, 6 .) (हो) अथवा विषम (3, 5, 7) (हो), स्निग्ध रूप (हो) अथवा रुक्षरूप (हो), (वे) यदि प्रथम अशरहित (होते हैं) तथा प्रत्येक सख्या से दो ही अधिक (होते हैं), (तो) निश्चय ही (आपस में) बध जाते हैं ।
- 118 (जब) परमाणु स्निग्धता में दो अंश (होता है), (तो) चार अंश स्निग्ध के साथ बध अनुभव करता है । और रुक्षता में पाँच अंश-युक्त (परमाणु) तीन-अंश युक्त (रुक्षता) से बाँधा जाता है ।
- 119 दो प्रदेश से आरभ करके (विभिन्न) आकार सहित सूक्ष्म तथा स्थूल स्कन्ध (होते हैं) । (परमाणु के) स्वकीय परिणमन के द्वारा (ही) पृथिवी, जल, अग्नि, वायु उत्पन्न होते हैं ।
- 120 अतिस्थूलस्थूल, स्थूल, स्थूल-सूक्ष्म, सूक्ष्म-स्थूल, सूक्ष्म-अतिसूक्ष्म— इस प्रकार पृथिवी से आरभ करके (स्कन्ध के) छह भेद होते हैं ।

121. भूपव्वदमादीया भणिदा अइथूलथूलमिदि खंधा ।
थूला इदि बिण्णेया सप्पोजलतेलमादीया ॥
122. छायातवमादीया थूलेदरखंधमिदि वियाणाहि ।
सुहुम थूलेदि भणिया खंधा चउरक्खविसया य ॥
123. सुहुमा हवन्ति खंधा पावोग्गा कम्मवग्गणस्स पुणो ।
तव्विवरीया खंधा अइसुहुमा इदि परव्वेदि ॥
124. अत्तादि अत्तमज्झं अत्तंतं एव इंदिए नेज्झं ।
अविभागी जं दव्वं परमाणू तं वियाणाहि ॥
125. एयरसरूवगंधं दो फासं तं हवे सहावगुणं ।
विहावगुणमिदि भणिदं जिणसमये सव्वपयडत्तं ॥
126. अण्णनिरावेक्खो जो परिणामो सो सहावपज्जाओ ।
खंधसरूवेण पुणो परिणामो सो विहावपज्जाओ ॥
127. धम्मत्थिकायमरसं अवण्णगंधं असद्दमप्फासं ।
लोगोगाढं पुट्ठं पिहुलमसंखादियपदेसं ॥
- 128 उदयं जह मच्छाणं गमणाणुग्गहयरं हवदि लोए ।
तह जीवपुग्गलाणं धम्मं दव्वं वियाणेहि ॥

- 121 भू, पर्वत आदि अतिस्थूलस्थूल स्कन्ध कहे गये (हैं) । घी, जल, तेल आदि स्थूल (स्कन्ध) समझे जाने चाहिए ।
- 122 छाया, घूप आदि (नेत्र के विषय होने के कारण) स्थूल-सूक्ष्म (स्कन्ध) (हैं) । (तुम) जानो और चार इन्द्रियो (कर्ण, घ्राण, रसना और स्पर्शन) के विषय सूक्ष्म-स्थूल स्कन्ध कहे गये (हैं) ।
- 123 (आत्मा से) सबध योग्य कर्मवर्गणा के स्कन्ध सूक्ष्म होते हैं और इसके विपरीत स्कन्ध अतिसूक्ष्म होते (हैं) । इस प्रकार आचार्य प्रतिपादन करते हैं ।
- 124 जो स्व (ही) आदि (हैं), स्व (ही) मध्य (हैं), स्व (ही) अन्त (हैं), (जो) इन्द्रिय द्वारा ग्रहण योग्य नहीं (हैं), (जो) भेद-रहित (हैं), वह परमाणु (हैं) । (तुम) जानो ।
- 125 (जिस परमाणु में) एक रस, (एक) रूप, (एक) गंध तथा दो स्पर्श (होते हैं), वह (परमाणु) स्वभाव गुणवाला होता है । सबके लिए प्रकटता गुणवाला (स्कन्ध) जिनशासन में विभाव-गुणवाला कहा गया (है) ।
- 126 (परमाणु में) (जो) दूसरे की अपेक्षारहित परिणमन (होता है), वह स्वभाव-परिणमन है । और (उसमें) जो स्कन्धरूप से परिणमन (होता है), वह विभाव-परिणमन (है) ।
- 127 धर्मास्तिकाय (द्रव्य) रसरहित, वर्णरहित, गंधरहित, शब्दरहित और स्पर्शरहित (होता है) । (वह) लोक में व्याप्त रहता है, और असस्यात प्रदेशवाला (होता है) (तथा) (उसके प्रदेश) (एक दूसरे को) छुए हुए (रहते हैं) ।
128. जिस प्रकार लोक में जल मछलियों के गमन में उपकार करनेवाला होता है, उसी प्रकार जीव और पुद्गलो के लिए (गमन में उपकार करनेवाला) धर्म द्रव्य (होता है) । (इसे) (तुम) समझो ।

129 जह हवदि धम्मदव्वं तह तं जाणेह दव्वमधमक्खं ।
ठिदिकिरियाजुत्ताणं कारणभूदं तु पुढवीव ॥

130. ण य गच्छदि धम्मत्थी गमण ण करेदि अण्णदवियस्स ।
हवदि गती स प्सरो जीवाणं पुग्गलाणं च ॥

131. विज्जदि जेसिं गमणं ठाणं पुण तेसिमेव संभवदि ।
ते सगपरिणामेहिं दु गमणं ठाणं च कुव्वन्ति ॥

132. गमणणिमित्तं धम्मं, अधम्मं ठिदि जीवपोग्गलाणं च ।
अवगहरा आयासं, जीवादी सव्वदव्वाणं ॥

133. सव्वेसिं जीवाणं सेसाणं तह य पुग्गलाण च ।
ज देदि विवरमखिलं तं लोए हवदि आयासं ॥

134. पुग्गलजीवणिबद्धो धम्माधम्मत्थिकायकालङ्घो ।
वट्टदि आयासे जो लोगो सो सव्वकाले दु ॥

135. सङ्भावसभावाण जीवाणं तह य पोग्गलाणं च ।
परियट्टणसंभूदो कालो णियमेण पण्णत्तो ॥

- 129 जिस प्रकार (रामान्य) (गुणो मे) धर्मास्तिकाय द्रव्य (होता है), उसी प्रकार उस अधर्मास्तिकाय नामवाले द्रव्य को (तुम) जानो । किन्तु (वह) स्थिति क्रिया मे तत्पर (जीव-पुद्गल) के लिए कारण बना हुआ (है), जैसे पृथ्वी (जीव-पुद्गल की) (स्थिति के लिए) (कारण होती है) ।
- 130 धर्मास्तिकाय (द्रव्य) (स्वयं) गतिशील नहीं (होता है) तथा दूसरे द्रव्यो को गति प्रदान नहीं करता है । (उससे) (तो) जीवो और पुद्गलो की स्व (उत्पन्न) गति मे फैलाव होता है ।
- 131 जिन (जीवो और पुद्गलो) की गति होती है, फिर उन्ही की स्थिति होती है । अत वे (जीव और पुद्गल) अपने परिणमन के द्वारा ही गति और स्थिति को उत्पन्न करते हैं । (धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय द्रव्य गति-स्थिति उत्पन्न नहीं करते हैं) ।
- 132 जीवो और पुद्गलो की गति मे (जो) (उदासीन) निमित्त (है), (वह) धर्मास्तिकाय (द्रव्य) (है) । (उनकी) स्थिति मे (जो) (निमित्त) (है), (वह) अधर्मास्तिकाय (द्रव्य) (है) । जीव आदि सभी द्रव्यो के लिए (जो) ठहरने का स्थान (होता है), (वह) आकाश (है) ।
- 133 लोक मे सभी जीवो के लिए और पुद्गलो के लिए और इसी प्रकार शेष द्रव्यो (धर्म, अधर्म और काल) के लिए जो पूरा स्थान देता है, वह आकाश होता है ।
- 134 जो (भाग) (विस्तृत) आकाश मे पुद्गलो और जीवो से जुड़ा हुआ (है), (जो) धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और काल से युक्त है, वह सभी समय (तीनों कालो) मे 'लोक' (कहा जाता है) ।
- 135 (वह) काल कहा गया (है) (जिसके) (कारण) अस्तित्व भाव को जीवो और उसी प्रकार पुद्गलो मे परिवर्तन अनिवार्यत उत्पन्न हुआ (करता है) ।

136. णत्थि चिरं वा खिप्पं मत्तारहिदं तु सा वि खलु मत्ता ।
पुग्गलदव्वेण विणा तम्हा कालो पडुच्चभवो ॥
137. कालो परिणामभवो परिणामो दव्वकालसंभूदो ।
दोण्हं एस सहावो कालो खणभंगुरो णियदो ॥
138. जीवादीदव्वाणं परिवट्ठणकारणं हवे कालो ।
धम्मादिचउण्णाणं सहागुवणपज्जया होति ॥
139. दव्वं सल्लक्खणिय उत्पादव्वयधुवत्तसंजुत्तं ।
गुणपज्जयासयं वा जं तं भण्णंति सव्वण्हू ॥
140. सत्ता सव्वपयत्था सविस्सरूवा अणंतपज्जाया ।
भंगुप्पादधुवत्ता सप्पडिवक्खा हवदि एक्का ॥
141. उप्पत्ती व विणासो दव्वस्स य एत्थि अत्थि सव्वभावो ।
विगमुप्पाद धुवत्तं करेति तस्सेव पज्जाया ॥
142. पज्जयविजुदं दव्वं दव्वविजुत्ता य पज्जया एत्थि ।
दोण्हं अणण्णभूदं भावं समणा परूविति ॥
143. दव्वेण विणा ए गुणा गुणेहि दव्वं विणा ण संभवदि ।
अव्वदिरित्तो भावो दव्वगुणाणं हवदि तम्हा ॥
144. भावस्स णत्थि णासो एत्थि अभावस्स चेव उप्पादो ।
गुणपज्जयेसु भावा उप्पादवए पकुव्वति ॥

- 136 माप के बिना 'दीर्घ काल' और 'तुरन्त' (ऐसे शब्द) नहीं (होते हैं) । तथा वह माप भी पुद्गल द्रव्य के बिना नहीं (होता है) । इसलिए (ऐसा) काल आश्रय से उत्पन्न (है) ।
- 137 (व्यवहार) काल पुद्गल के परिवर्तन से उत्पन्न हुआ (है), परिवर्तन द्रव्यकाल से उत्पन्न हुआ (है) । दोनों का यह स्वभाव (है) । (अतः) (व्यवहार) काल नश्वर (है), और (द्रव्यकाल) स्थायी (है) ।
- 138 जीव आदि द्रव्यों के परिवर्तन का कारण काल होता है । धर्मादि चार अन्य (द्रव्यों) में स्वभावगुणपर्याय होती है ।
- 139 जो सत्लक्षणयुक्त (है), उत्पाद, व्यय और ध्रुव्य से सहित है और (जो) गुण और पर्याय का आश्रय (है), वह द्रव्य (है) इस प्रकार सर्वज्ञ कहते हैं ।
- 140 सत्ता सर्वपदार्थमय होती है, अनेक प्रकारसहित (रहती है), अनन्त पर्यायवाली (है), उत्पाद, व्यय और ध्रुवतामय (है), एक (है), विरोधी पहलू-सहित है ।
- 141 द्रव्य की न उत्पत्ति (होती है) और न ही (उसका) विनाश (होता है) । (वह) (तो) अस्तित्व स्वभाववाला है । उस (द्रव्य) की पर्यायों ही उत्पत्ति, नाश और ध्रुवता को प्रकाशित करती है ।
- 142 पर्यायरहित द्रव्य नहीं है, द्रव्यरहित पर्याय भी (नहीं है), दोनों का अस्तित्व अभिन्न बना हुआ (है) । (ऐसा) श्रमण कहते हैं ।
- 143 द्रव्य के बिना गुण नहीं (होते हैं), गुण के बिना द्रव्य नहीं (होता है) । अतः द्रव्य और गुण का अस्तित्व अभिन्न होता है ।
- 144 सत् (विद्यमान पदार्थ) का नाश नहीं (होता है), असत् (अविद्यमान पदार्थ) का उत्पाद नहीं (होता है) । द्रव्य गुण-पर्यायों के द्वारा ही उत्पाद-व्यय करते हैं ।

- 145 भावा जीवादीया जीवगुणा चेदणा य उवओगो ।
सुरणरणारयतिरिया जीवस्स य पज्जया बहुगा ॥
146. मणुसत्तणेण णट्ठो देही देवो हवेदि इदरो वा ।
उभयत्त जीवभावो ण णस्सदि एा जायदे अण्णो ॥
147. सो चेव जादि मरणं जादि एा णट्ठो एा चेव उप्पण्णो ।
उप्पण्णो य विणट्ठो देवो मणुसो त्ति पज्जाओ ॥
148. अत्थो खलु दव्वमओ दव्वाणि गुणप्पगाणि भणिदाणि ।
तेहि पुणो पज्जाया पज्जयमूढा हि परसमया ॥
- 149 जे पज्जयेसु णिरदा जीवा परसमयिगत्ति णिट्ठिदा ।
आदसहावम्मि ठिदा ते सगसमया मुणेदव्वा ॥



- 145 जीव आदि सत् (विद्यमान पदार्थ) (है) । चेतना और ज्ञान जीव के गुण (है) । जीव की अनेक पर्यायि (है)—देव, मनुष्य, नारकी और तिर्यञ्च ।
- 146 (मरण के कारण) मनुष्यत्व से लुप्त हुआ जीव (पुनर्जन्म लेते समय) देव अथवा अन्य कोई पर्यायिवाला उत्पन्न होता है । (किन्तु) दोनों में स्थित जीव पदार्थ (द्रव्य) न नष्ट होता है और न ही नया उत्पन्न होता है, अर्थात् जीव वही रहता है ।
- 147 वही (जीव) (पुनर्जन्म में) उत्पन्न होता है (जो) मरण को प्राप्त होता है । वह न नष्ट हुआ (है) (और) न (ही) (नया) उत्पन्न हुआ (है) । इस प्रकार मनुष्य पर्यायि नष्ट हुई (है) और देव पर्यायि उत्पन्न हुई (है) । (जीव वही वर्तमान है) ।
- 148 पदार्थ द्रव्यमय (होता है) । द्रव्य गुणस्वरूपवाले कहे गये (है) । और उन (द्रव्यों) में ही पर्यायि (उत्पन्न होते हैं) । (जो) पर्यायो में ही मोहित (है), (वे) मूर्च्छित (कहे गये हैं) ।
- 149 जो जीव पर्यायो में लीन (है), (वे) मूर्च्छित कहे गये (है) । (तथा) जो आत्म-स्वभाव में ठहरे हुए (है), वे जाग्रत समझे जाने चाहिए ।



संकेत-सूची

(अ)	—अव्यय (इसका अर्थ = लगाकर लिखा गया है)	भूकृ	—भूतकालिक कृदन्त
अक	—अकर्मक क्रिया	व	—वर्तमानकाल
अनि	—अनियमित	वकृ	—वर्तमान कृदन्त
आज्ञा	—आज्ञा	वि	—विशेषण
कर्म	—कर्मवाच्य	विधि	—विधि
(क्रिविग्र)	—क्रिया विशेषण अव्यय (इसका अर्थ = लगाकर लिखा गया है)	विधिकृ	—विधि कृदन्त
तुवि	—तुलनात्मक विशेषण	स	—सर्वनाम
पु०	—पुल्लिङ्ग	संकृ	—सम्बन्धक कृदन्त
प्रे	—प्रेरणार्थक क्रिया	सक	—सकर्मक क्रिया
भकृ	—भविष्य कृदन्त	सवि	—सर्वनाम विशेषण
भवि	—भविष्यत्काल	स्त्री	—स्त्रीलिङ्ग
भाव	—भाववाच्य	हेकृ	—हेत्वर्थ कृदन्त
भू	—भूतकाल	()	—इस प्रकार के कोष्ठक मे मूल शब्द रखा गया है ।

[[() + () + () .]
 इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर + चिह्न किन्हीं शब्दों में सवि का द्योतक है । यहाँ अन्दर के कोष्ठकों में माथा के शब्द ही रख दिए गए हैं ।

[() — () — () —]

इस प्रकार के कोष्ठक के अन्दर '—' चिह्न समान का द्योतक है ।

[[() — () — ()] वि]

• जहाँ समन्त पद विवेचन का कार्य करता है, वहाँ उस प्रकार के कोष्ठक का प्रयोग किया गया है ।

• जहाँ कोष्ठक के बाहर केवल सग्या (जैसे 1/1, 2/1 आदि) ही लिखी है वहाँ उस कोष्ठक के अन्दर का शब्द 'सज्ञा' है ।

• जहाँ कर्मवाच्य, कृदन्त आदि प्राकृत के नियमानुसार नहीं बने हैं वहाँ कोष्ठक के बाहर 'अनि' भी लिखा गया है ।

1/1 अक या सक—उत्तम पुरुष/
एकवचन

1/2 अक या सक—उत्तम पुरुष/
बहुवचन

2/1 अक या सक—मध्यम पुरुष/
एक वचन

2/2 अक या सक—मध्यम पुरुष/
बहुवचन

3/1 अक या सक—अन्य पुरुष/
एक वचन

3/2 अक वा सक—अन्य पुरुष/
बहुवचन

1/1—प्रथमा/एकवचन

1/2—प्रथमा/बहुवचन

2/1—द्वितीया/एकवचन

2/2—द्वितीया/बहुवचन

3/1—तृतीया/एकवचन

3/2—तृतीया/बहुवचन

4/1—चतुर्थी/एकवचन

4/2—चतुर्थी/बहुवचन

5/1—पचमी/एकवचन

5/2—पचमी/बहुवचन

6/1—षष्ठी/एकवचन

6/2—षष्ठी/बहुवचन

7/1—सप्तमी/एकवचन

7/2—सप्तमी/बहुवचन

8/1—सवोधन/एकवचन

8/2—सवोधन/बहुवचन

व्याकरणिक विश्लेषण एवं शब्दार्थ

- 1 दन्व (दन्व) 1/1 सहावसिद्ध [(सहाव)-(सिद्ध) भूकृ 1/1 अनि] सदिति [(सत्)+(इति)] सत् (मत्) 1/1 अनि इति (अ) = इस विवरणवाला जिणा (जिण) 1/2 तच्चदो (तच्च) पचमी अर्थक, 'दो'-प्रत्यय = वास्तविक रूप से, समक्खादो (समक्खाद) भूकृ 1/2 अनि सिद्ध (सिद्ध) भूकृ 2/1 अनि आगमदो (आगम) पचमी अर्थक, 'दो'-प्रत्यय = आगम से णेच्छदि [(ण)+(इच्छदि)] ण (अ) = नहीं इच्छदि (इच्छ) व 3/1 सक जो (ज) 1/1 सवि सो (त) 1/1 सवि हि (अ) = निस्सन्देह परसमओ (परसमअ) 1/1 वि ।
- 1 दन्व = द्रव्य । सहावसिद्ध = स्वभाव से सिद्ध । सत् = मत् इति = इस विवरणवाला । जिणा = जितेन्द्रियो ने । तच्चदो = वास्तविक रूप से । समक्खादो = कहा है । सिद्ध = स्थापित (द्रव्य) को । तथ = ठीक इसी प्रकार । णेच्छदि = स्वीकार नहीं करता है । जो = जो (व्यक्ति) । सो = वह । हि = निस्सन्देह । परसमओ = असत्य दृष्टिवाला ।
- 2 ण (अ) = नहीं हवदि (हव) व 3/1 अक जदि (अ) = यदि सद्व्व [(सत्)+(दन्व)] सत् (सत्) 1/1 वि अनि दन्व (दन्व) 1/1 असद्व्व [(असत्)+(धुव)] असत् (असत्) 1/1 वि अनि धुव (धुव) 1/1 वि हवदि (हव) व 3/1 अक त (त) 1/1 सवि कध(अ) = कैसे दन्व (दन्व) 1/1 हवदि (हव) व 3/1 अक पुणो (अ) = पादपूरक अण्ण (अण्ण) 1/1 वि वा(अ) = अथवा तम्हा = अत दन्व (दन्व) 1/1 सय (अ) = स्वय सत्ता (सत्ता) 1/1
- 2 ण = नहीं । हवदि = होता है । जदि = यदि । सद्व्व = सत्, द्रव्य । असद्व्व = असत्, नित्य । हवदि = होता है → होगा । त = वह । कध = कैसे । दन्व = द्रव्य । हवदि = होता है । अण्ण = मित्र । वा = अथवा । तम्हा = अत । दन्व = द्रव्य । सय = स्वय । सत्ता = सत्ता ।

- 3 दब्ब (दब्ब) 1/1 जीवमजीव [(जीव) + (अजीव)] जीव (जीव) 1/1 अजीव (अजीव) 1/1 जीवो (जीव) 1/1 पुण (अ) = और चेदणोवयोगमयो [(चेदण) + (उवयोगमयो)] [चेदण]-(उवयोगमय) 1/1 वि] पोगलदब्बप्पमुहं [(पोगल)-(दब्ब)-(प्पमुह)¹1/1 वि] अचेदण (अचेदण) 1/1 वि हवदि (हव) व 3/1 अक य (अ) = इसके विपरीत अजीव (अजीव) 1/1 ।

1 समास के अन्त में अर्थ होता है 'सहित' (आप्टे, सस्कृत-हिन्दी कोश) ।

- 3 दब्ब = द्रव्य । जीवमजीव = जीव, अजीव । जीवो = जीव । पुण = और । चेदणोवयोगमयो = चेतन, उपयोगमय । पोगलदब्बप्पमुहं = पुद्गल द्रव्य-सहित । अचेदण = अचेतन । हवदि = होता है । य = इसके विपरीत । अजीव = अजीव ।

- 4 जाणदि (जाण) व 3/1 सक पस्सदि (पस्स) व 3/1 सक सब्ब (सब्ब) 2/1 वि इच्छदि (इच्छ) व 3/1 सक सुख (सुख) 2/1 विभेदि (विभेदि) व 3/1 अक अनि दुक्खादो (दुक्ख) 5/1 कुच्चदि (कुच्च) व 3/1 सक हिदमहिद [(हिद) + (अहिद)] हिद (हिद) 2/1 अहिद (अहिद) 2/1 वा (अ) = तथा भुजदि (भुज) व 3/1 सक जीवो (जीव) 1/1 फल (फल) 2/1 तेसि (त) 6/2 स ।

- 4 जाणदि = जानता है । पस्सदि = देखता है । सब्ब = सबको । इच्छदि = चाहता है । सुख = सुख (को) । विभेदि = डरता है । दुक्खादो = दुःख से । कुच्चदि = करता है । हिदमहिद = उचित और अनुचित को । वा = तथा । भुजदि = भोगता है । जीवो = जीव । फल = फल को । तेसि = उनके ।

- 5 सुहदुक्खजाणणा [(सुह)-(दुक्ख)-(जाणणा) 1/1] वा (अ) = तथा हिदपरियम्म¹ [(हिद)-(परियम्म) 1/1] च (अ) = तथा अहिदभीरुत्त [(अहिद)-(भीरुत्त) 1/1] जस्स² (ज) 6/1 स ण(अ) = नहीं विज्जदि (विज्ज) व 3/1 अक णिच्च (अ) = कभी भी त (त) 2/1 स समणा (समण) 1/2 बिति (बू) व 3/2 स अज्जीव (अज्जीव) 2/1 ।

1 परिकमंन् → परिकर्म → परिकम्म → परियम्म ।

2 कभी-कभी सप्तमी विभक्ति के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हेम प्राकृत व्याकरण, 3-134) ।

- 5 सुंहदुखखजाणणा = सुख-दुख का ज्ञान । वा = तथा । हिदपरियम्मं = हित का उत्पादन । च = तथा । अहिदभीरुत्तं = अहित से भय । जस्स = जिसका → जिसमें । ए = नहीं । विज्जदि = वर्तमान होता है । णिच्च = कभी भी । त = उसको । समणा = धमण । बिति = कहते हैं । अज्जीव = अजीव (को) ।
- 6 जीवा (जीव) $1/2$ पोगलकाया [(पोगल)-(काय) $1/2$] धम्माधम्मा [(धम्म)+(अधम्मा)] [(धम्म)-(अधम्म) $1/2$] य(अ) = और काल (काल) मूलशब्द $1/1$ आयास (आयास) $1/1$ तच्चत्था (तच्चत्थ) $1/2$ इदि (अ) = शब्दस्वरूपद्योतक भणिदा (भण) भूक $1/2$ णाणागुणपज्जयेहि [(णाणा)-(गुण)-(पज्जय) $3/2$] संजुत्ता (मजुत) भूक $1/2$ अनि ।
6. जीवा = (अनेक) जीव । पोगलकाया = पुद्गलो का समूह । धम्माधम्मा = धर्म, अधर्म । य = और । काल = काल । आयास = आकाश । तच्चत्था = वास्तविक पदार्थ (द्रव्य) । भणिदा = कहे गये हैं । णाणागुणपज्जयेहि = अनेक गुण-पर्यायो से । संजुत्ता = सहित ।
- 7 आगासकालजीवा [(आगास)-(काल)-(जीव) $1/2$] धम्माधम्मा [(धम्म)+(अधम्मा)] [(धम्म)-(अधम्म) $1/2$] य = और मुत्तिपरिहीणा [(मुत्ति)-(परिहीण) भूक $1/2$ अनि] मुत्त (मुत्त) $1/1$ वि पुगलदव्व [(पुगल)-(दव्व) $1/1$] जीवो (जीव) $1/1$ खलु (अ) = ही चेदणो (चेदण) $1/1$ तेसु (त) $7/2$ स ।
7. आगासकालजीवा = आकाश, काल, जीव । धम्माधम्मा = धर्म, अधर्म । य = और । मुत्तिपरिहीणा = मूर्ति से रहित (अमूर्तिक) । मुत्त = मूर्त । पुगलदव्व = पुद्गल द्रव्य । जीवो = जीव । खलु = ही । चेदणो = चेतन । तेसु = उनमें ।
- 8 जे (ज) $1/2$ सवि खलु = पादपूरक इदियगेज्झा [(इन्दिय)-(गेज्झ) विधि क $1/2$ अनि] विसया (विसय) $1/2$ जीवेहि (जीव) $3/2$ होति (हो) व $3/2$ अक ते (त) $1/2$ सवि मुत्ता (मुत्त) $1/2$ वि सेस (सेस) $1/1$ वि हवदि (हव) व $3/1$ अक अमुत्त (अमुत्त) $1/1$ वि चित्त (चित्त) $1/1$ उभय (उभय) $2/1$ वि समादियदि (स+आइ→ समाइ→ समादि→ समादिय) व $3/1$ सक ।

8 जै = जो । इन्द्रियगेज्झा = इन्द्रियो से ग्रहण किये जाने योग्य । विसया = पदार्थ । जीर्वेहि = जीवो द्वारा । होति = होते हैं । ते = वे । मुत्ता = मूर्त । सेस = शेष । हवदि = होता है । अमुत्त = अमूर्त । चित्त = चित । उभय = दोनों को । समादियदि = भली प्रकार से समझता है ।

9 वण्णरसगघफासा [(वण्ण) - (रस) - (गघ) - (फास) 1/2] विज्जते (विज्जते) व 3/2 अक अनि पुग्गलस्स¹ (पुग्गल) 6/1 सुहुमादो (सुहुम) 5/1 पुढवीपरियतस्स¹ ([पुढवी) - (परियत) 6/1 वि] य = भी सद्दो (सद्द) 1/1 सो (त) 1/1 सवि पोग्गलो (पोग्गल) 1/1 चित्तो (चित्त) 1/1 वि ।

1 कमी-कमी पण्ठी विमत्ति का प्रयोग सप्तमी के स्थान पर पाया जाता है (हेम-प्राकृत-व्याकरण, 3-134) ।

9 वण्णरसगघफासा = वर्ण, रस, गघ, स्पर्श । विज्जते = वर्तमान रहते हैं । पुग्गलस्स = पुद्गल के → पुद्गल में । सुहुमादो = सूक्ष्म से । पुढवी-परियतस्स = पृथिवी तक फैले हुए । य = और । सद्दो = शब्द । सो = वह । पोग्गलो = पुद्गलो । चित्तो = विभिन्न प्रकार का ।

10-11 आगासस्सवगाहो [(आगासस्स) + (अवगाहो)] आगासस्स (आगास) 6/1 अवगाहो (अवगाह) 1/1 धम्मद्वस्स [(धम्म)-(द्व) 6/1] गमणहेतुत्त [(गमण)-(हेतुत्त) 1/1] धम्मदरदव्वस्स [(धम्म) + (इदर) + (दव्वस्स)] [(धम्म)-(इदर) वि-(दव्व) 6/1] दु(अ) = तो गुणो (गुण) 1/1 पुणो = और ठाणकारणदा [(ठाण)-(कारणदा) 1/1]

कालस्स (काल) 6/1 वट्टणा (वट्टणा) 1/1 से (अ) = वाक्य की शोभा, गुणोवओगोत्ति [(गुण) + (उवओगो) + (त्ति)] [(गुण)-(उवओग) 1/1] त्ति(अ) = शब्दस्वरूपद्योतक अप्पणो (अप्प) 6/1 भणिदो (भण) भूक्क 1/1 नेया (नेय) भूक्क 1/2 अनि सखेवादो(सखेव) 5/1 गुणा (गुण) 1/2 हि (अ) = ही मुत्तिप्पहीणाण [(मुत्ति)-(प्पहीण) भूक्क 6/2 अनि]

10-11 आगासस्सवगाहो = आकाश का, स्थान । धम्मद्वस्स = धर्म द्रव्य का । गमणहेतुत्त = गमन में निमित्तता । धम्मदरदव्वस्स = धर्म के, विरोधी, द्रव्य का । दु = तो । गुणो = गुण । पुणो = और । ठाणकारणदा = स्थिति (ठहरने) में कारणता ।

कालस्सं = काल का । वट्टणा = परिणमन (परिवर्तन) । गुणो-
वओगोत्ति = गुण, उपयोग (ज्ञान-चैतन्य) । अप्पणो = आत्मा का ।
भणिदो = कहा गया । णेया = समझे जाने चाहिए । सखेवादो = मक्षेप मे ।
गुणा = गुण । हि = ही । मुत्तिप्पहीणाण = मूर्तिरहित (द्रव्यों) के ।

- 12 आगासकालपुग्गलधम्माधम्मेषु [(आगाम) + (काल) + (पुग्गल) +
(धम्म) + (अधम्मेषु)] [(आगाम)-(काल)-(पुग्गल)-(धम्म)-
(अधम्म) 7/2] णत्थि = नहीं (रहते) हैं । जीवगुणा [(जीव)-(गुण)
1/2] तेस्सि¹ (त) 6/2 म अचेदणत्त (अचेदणत्त) 1/1 भाणिद (भण)
भूक्क 1/1 जीवस्स¹ (जीव) 6/1 चेदणदा (चेदणदा) 1/1 ।

1 कभी कभी पंठी का प्रयोग मप्तमी के स्थान पर पाया जाता है (हेम
प्राकृत व्याकरण, 3-134) ।

- 12 आगासकालपुग्गलधम्माधम्मेषु = आकाश, काल, पुद्गल, धर्म, अधर्म मे ।
णत्थि = नहीं रहते हैं । जीवगुणा = जीव के गुण । तेस्सि = उनके → उनमे ।
अचेदणत्त = अचेतनता । भाणिद = कही गई है । जीवस्स = जीव के → जीव
मे । चेदणदा = चेतनता ।

- 13 जीवा = जीव 1/2 पुग्गलकाया [(पुग्गल)-(काय) 1/2] सह (अ) =
साथ-साथ, सविकरिया [(म) वि-(निकरिया) 1/1] हवति (हव) व
3/2 अक ण (अ) = नहीं य = किन्तु सेसा (मेस) 1/2 वि पुग्गलकरणा
[(पुग्गल)-(करण) 5/1] जीवा (जीव) 1/2 खधा (खध) 1/2
खलु (अ) = पादपूरक कालकरणा [(काल)-(करण) 5/1] दु (अ) =
और ।

- 13 जीवा = जीव । पुग्गलकाया = पुद्गलराणि । सह = साथ-साथ ।
सविकरिया = क्रिया-महित । हवति = होते हैं । ण = नहीं । य = किन्तु ।
सेसा = (शेष) । पुग्गलकरणा = पुद्गल के निमित्त से । जीवा = जीव ।
खधा = पुद्गल (स्कन्ध) । कालकरणा = काल के निमित्त से । दु = और ।

- 14 एदे (एद) 1/2 सवि छद्दवाणि [(छ)-(द्व) 1/2] य = पादपूरक
काल (काल) 2/1 मोत्तूण (मोत्तूण) सक्र अनि अत्थिकायत्ति
[(अत्थिकाय) + (त्ति)] अत्थिकाय (अत्थिकाय)/मूलशब्द 1/2 त्ति
(अ) = शब्दस्वरूपद्योतक । णिद्दिट्ठा (णिद्दिट्ठ) भूक्क 1/2 अनि जिणसमये

[(जिण)-(समय) 7/1] काया (काय) 1/2 हु (अ) = ही बहुपदेसत्त (बहुपदेसत्त) 1/1।

- 14 एदे = ये । छह्वाणि = छ द्रव्य । काल = काल को । भोत्तूण = छोड़कर । अत्थिकाय = अस्तिकाय । णिहिट्ठा = कहे गये हैं । जिणसमये = जिन-सिद्धान्त मे । काया = काय । हु = ही । बहुपदेसत्त = बहुप्रदेशपना ।

- 15-16 संखेज्जासखेज्जा-णतपदेसा [(सखेज्ज) + (असखेज्ज) + (अणत) + (पदेसा)] [(सखेज्ज)-(असखेज्ज)-(अणत)-(पदेस) 1/2] हवति (हव) व 3/2 अक मुत्तस्स (मुत्त) 6/1 धम्माधम्मस्स [(धम्मा) + (अधम्मस्स)] [(धम्म)-(अधम्म) 6/1] पुणो (अ) = तथा जीवस्स (जीव) 6/1 असखदेसा (असखदेस) 1/2 हु (अ) = पादपूरक । लोयायासे (लोयायाम) 7/1 ताव (अ) = उतने इवरस्स (इवर) 6/1 वि अणंतयं (अणतय) 1/1 वि य स्वाधिक हवे (हव) व 3/2 अक देसा (देस) 1/2 कालस्स (काल) 6/1 ए (अ) = नहीं कायत्त (कायत्त) 1/1 एगपदेसो [(एग)-(पदेस) 1/1] हवे (हव) व 3/1 अक जम्हा (अ) = चूक ।

- 15-16 संखेज्जासखेज्जा-णतपदेसा = सख्येय, असख्येय, अनन्त प्रदेश । हवति = होते हैं । मुत्तस्स = मूर्त (पुदगल) (द्रव्य) के । धम्माधम्मस्स = धर्म के, अधर्म के । पुणो = तथा । जीवस्स = जीव के । असखदेसा = असख्य प्रदेश ।

लोयायासे = लोकाकाश मे । ताव = उतने → इतने ही । इवरस्स = विरोधी (अलोकाकाश) मे । अणतय = अनन्त । कालस्स = काल के । ए = नहीं । कायत्त = कायता । एगपदेसो = एक प्रदेश । हवे = होता है । जम्हा = चूक ।

- 17 आगासमणुणिविट्ठ [(आगास) + (अणु) + (णिविट्ठ)] आगास¹ (आगास) 2/1 [(अणु)-(णिविट्ठ) भूक 1/1 अनि] आगासपदेस-सण्णया [(आगास)-(पदेस)-(सण्णा) 3/1 अनि] भणिव (ण) भूक 1/1 सव्वेसि² (सव्व) 6/2 सवि च (अ) = पादपूरक अणूण² (अणु) 6/2

1 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीय का प्रयोग पाया जाता है (हेम-प्राकृत व्याकरण, 3-137) ।

2 कभी-कभी द्वितीया के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हेम-प्राकृत व्याकरण, 3-134) ।

6/2 सक्कदि (मक्क) व 3/1 अक त (त) 1/1 मवि देदुमवकास [(देदु) + (अवकाम)] देदु (दा) हेक्क अवकाम (अवकास) 2/1 ।

17 आगासमणुणिविट्ठ = आकाश मे, अणु, स्थित । आगासपदेससणया = आकाश का (एक) प्रदेश, नाम द्वारा । भणिदं = कहा गया (है) । सत्वेसि अणूण = मव अणुओ को । सक्कदि = ममर्थ होता है । त = वह । देदुमवकास = स्थान देने के लिए ।

18 जस्स (ज) 6/1 स ए = नही सति (अम) व 3/1 अक पदेसा (पदेम) 1/2 पदेसमेत्त [(पदेम)-(मेत्त) 1/1] व(अ) = भी तच्चदो (अ) = वस्तुत णादु (णा) हेक्क सुण्ण (मुण्ण) 1/1 जाण (जाण) विधि 2/1 सक तमत्य [(त) + (अत्य)] त (त) 1/1 सवि अत्य (अत्य) 1/1 अत्यतरभूदमत्थीदो [(अत्यतर) + (भूद) + (अत्थीदो)] [(अत्यतर)-(भूद) भूक्क 1/1 अनि] अत्थीदो (अत्थि) 5/1 ।

18 जस्स = जिसके । ए = नही । सति = है । पदेसा = प्रदेश । पदेसमेत्त = प्रदेश मात्र । व = भी । तच्चदो = वस्तुत । णादु = जानने के लिए । सुण्ण = शून्य । जाण = समझो । तमत्य = वह द्रव्य । अत्यतरभूदमत्थीदो = [(अत्यतर) + (भूद) + (अत्थीदो)] = विपरीत, हुआ, अस्तित्व से ।

19 अण्णोण्ण¹ (अण्णोण्ण) 2/1 वि पविसता (पविस) वक्क 1/2 दिता (दा) वक्क 1/2 ओगासमण्णमण्णस्स [(ओगास) + (अण्णमण्णस्स)]² ओगास (ओगास) 2/1 अण्णमण्णस्स (अण्णमण्ण) 6/1 वि मेलता (मेल) वक्क 1/2 वि = यद्यपि य = तथा णिच्च (अ) = सदैव सग (सग) 2/1 वि सभाव (सभाव) 2/1 ए (अ) = नही विजहति (विजह) व 3/2 मक ।

1 गमन अर्थ मे द्वितीया का प्रयोग है ।

2 कभी-कभी द्वितीया के स्थान पर पण्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हेम-प्राकृत व्याकरण, 3-134) ।

19 अण्णोण्ण = एक दूसरे को → एक दूसरे मे । पविसता = प्रवेश करते हुए । दिता = देते हुए । ओगासमण्णमण्णस्स [(ओगास) + (अण्णमण्णस्स)] = स्थान (को), एक दूसरे को । मेलता = सम्पर्क करते हुए । वि = यद्यपि ।

य = और । णिच्च = मदैव । सग = निज (को) । सभाव = स्वभाव को ।
ए = नहीं । विजहति = छोड़ते हैं ।

20 जीवोत्ति [(जीवो) + (इति)] जीवो (जीव) 1/1 इति (अ) = शब्द
स्वरूप द्योतक हवदि (हव) व 3/1 अक चेदा (चेदा) 1/1 वि उपभोग-
विसेसिदो [(उपभोग)-(विसेसिद) भूक 1/1 अनि] पहू (पहु) 1/1
वि कत्ता (कत्तु) 1/1 वि भोत्ता (भोत्तु) 1/1 वि य (अ) = तथा
देहमेत्तो [(देह)-(मत्त) 1/1 वि] ण हि (अ) = कभी भी नहीं मुत्तो
(मुत्त) 1/1 वि कम्मसजुत्तो [(कम्म)-(सजुत्त) भूक 1/1 अनि]

20 जीवोत्ति = जीवो + इति = जीव । हवदि = होता है । चेदा = चेतनामय ।
उपभोगविसेसिदो = ज्ञान-गुण की विशेषता लिये हुए । पहू = समर्थ । कत्ता =
कर्त्ता । भोत्ता = भोत्ता । य = तथा । देहमेत्तो = देह जितना । ए हि =
कभी भी नहीं । मुत्तो = इन्द्रियो द्वारा ग्रहण (मूर्त) । कम्मसजुत्तो = कर्मों
से युक्त ।

21 पाणेहिं (पाण) 3/2 चटुहिं (चटु) 3/2 वि जीवदि (जीव) व 3/1 अक
जीवस्सदि (जीव) भवि 3/1 अक जो (ज) 1/1 सवि हु (अ) = तथा
जीविदो (जीव) भूक 1/1 पुव्व (अ) = विगत काल मे सो (त) 1/1
सवि जीवो (जीव) 1/1 पाणा (पाण) 1/2 पुण (अ) = और
बलमिदियमाउ [(बल) + (इदिय) + (आउ)] बल (बल) 1/1
इदिय (इदिय) 1/1 आउ (आउ) मूलशब्द 1/1 उस्सासो (उस्सास)
1/1 ।

21 पाणेहिं = प्राणो से । चटुहिं = चार (से) । जीवदि = जीता है । जीव-
स्सदि = जीवेगा । जो = जो । हु = तथा । जीविदो = जिया । पुव्व =
विगत काल मे । सो = वह । जीवो = जीव । प्राणा = प्राण । पुण = और ।
बलमिदियमाउ = बल + इदिय + आउ = बल, इन्द्रिय, आयु । उस्सासो =
श्वाम ।

22 जीवा (जीव) 1/2 ससारत्था (समारत्थ) 1/2 वि णिब्बादा (णिब्बाद)
भूक 1/2 अनि चेदणप्पगा [(चेदण) + (अप्पगा)] [(चेदण)-
(अप्पग) 1/2 ग स्वार्थिक] वि] दुविहा (दुविह) 1/2 वि उवभोग-
लक्खणा [(उवभोग)-(लक्खण) 1/2] वि] वि = भी य = तथा

देहादेहप्वीचारा¹ [(देह) + (अदेह) + (प्वीचारा)] [[(देह)-(अदेह)-(प्वीचार) 1/2] वि]

1 प्रविचार→ पविचार = भेद (Monier Williams, Sam Eng Dictionary) ।

22 जीवा = जीव । ससारत्या = ममार मे स्थित । णिव्वादा = ममार मे मुक्त । चेदणप्पगा = चेतना स्वरूपवाले । दुविहा = दो प्रकार के । उवन्नो-लक्खणा = ज्ञान-स्वभाववाले । वि = मी । य = तथा । देहादेहप्वीचारा = देहसहित और देहरहित भेदवाले ।

23 एदे (एद) 1/2 सवि सव्वे (मव्व) 1/2 सवि भावा (भाव) 1/2 ववहारणय (ववहारणय) 2/1 पडुच्च (अ) = अपेक्षा करके भणिदा (भण) भूक 1/2 - हु (अ) = सचमुच सव्वे (मव्व) 1/2 सवि सिद्धसहावा [(सिद्ध)-(सहाव) 1/2] सुद्धणया (मुद्धणय) 5/1 ससिदी (ससिदि) 1/1 जीवा (जीव) 1/2 ।

23 एदे = ये । सव्वे = सभी । भावा = भाव । ववहारणय = व्यवहारणय को । पडुच्च (अ) = अपेक्षा करके । भणिदा = कहे गये हैं । हु (अ) = सचमुच । सव्वे = सभी । सिद्धसहावा = सिद्ध स्वरूप । सुद्धणया = शुद्धनय से । ससिदी = मसार-चक्र । जीवा = जीव ।

24 अप्पा (अप्प) 1/1 परिणामप्पा [(परिणाम) + (अप्पा)] [(परिणाम)-(अप्प) 1/1] वि परिणामो (परिणाम) 1/1 णाण-कम्मफलभावी [(णाण)-(कम्म)-(फल)-(भावि) 1/1 वि] तम्हा (अ) = इसलिए णाण (णाण) 1/1 कम्म (कम्म) 1/1 फल (फल) 1/1 च (अ) = और आदा (आद) 1/1 मुणेदव्वो (मुण) विधिक्क 1/1 ।

24 अप्पा = आत्मा । परिणामप्पा = परिणाम-स्वभाववाला । परिणामो = परिणाम । णाणकम्मफलभावी = ज्ञान-(चेतना), प्रयोजन-(चेतना), (कर्म)-फल-(चेतना) के रूप में, होनेवाला । तम्हा = इसलिए । णाण = ज्ञान-(चेतना) । कम्म = प्रयोजन-(चेतना) । फल = (कर्म)-फल-(चेतना) । च = और । आदा = आत्मा । मुणेदव्वो = सभी जानी चाहिए ।

25 कम्माण (कम्म) 6/2 फलमेवको [(फल) + (एवको)] फल (फल) 2/1 एवको (एवक) 1/1 वि एवको (एवक) 1/1 वि कज्ज (कज्ज) 2/1. तु (अ) = तथा णाणमघ [(णाण) + (अघ)] णाण (णाण) 2/1. अघ (अ) = अघ एवको (एवक) 1/1 वि चेदयदि (चेदयदि) व 3/1 सक अनि जीवरासी [(जीव)-(रामि) 1/1] चेदगभावेण [(चेदग)-(भाव) 3/1] तिविहेण (तिविह) 3/1 वि ।

25 कम्माण = कर्म के । फलमेवको = कुछ फल को । एवको = कुछ । कज्ज = प्रयोजन को । तु = तथा । णाणमघ = णाण + अघ = ज्ञान को, अघ । एवको = कुछ । चेदयदि = अनुभव करता है । जीवरासी = जीव-समूह । चेदगभावेण = सचेतन परिणमन से ।

26 परिणमदि (परिणम) व 3/1 अक चेदणाए (चेदणा) 7/1 आदा (आदा) 1/1 पुण (अ) = तथा चेदणा (चेदणा) 1/1 तिधाभिमदा [(तिधा) + (अभिमदा)] तिधा (अ) = तीन प्रकार से, अभिमदा (अभिमदा) भूक 1/1 अनि सा (ता) 1/1 सवि पुण (अ) = फिर णाणे (णाण) 7/1 कम्मे (कम्म) 7/1 फलम्मि (फल) 7/1 वा (अ) = तथा कम्मणो (कम्मणो) 6/1 अनि भणिदा (भण) भूक 1/1 ।

26 परिणमदि = रूपान्तरित होती है । चेदणाए = चेतनारूप मे । आदा = आत्मा । पुण (अ) = तथा । चेदणा = चेतना । तिधाभिमदो = तिधा + अभिमदा = तीन प्रकार से, मानी गई है । सा = वह । पुण = फिर । णाणे = ज्ञान मे । कम्मे = कर्म मे । फलम्मि = फल मे । वा = तथा । कम्मणो = कर्म के । भणिदा = कही गई है ।

27 णाण (णाण) 1/1 अत्थवियप्पो [(अत्थ)-(वियप्प) 1/1] कम्म (कम्म) 1/1 जीवेण (जीव) 3/1 ज (ज) 1/1 सवि समारद्ध (समारद्ध) भूक 1/1 अनि तमणेगविध [(त) + (अणेगविध)] त (त) 1/1 सवि अणेगविध (अणेगविध) 1/1 वि भणिद (भण) भूक 1/1 फलत्ति [(फल) + (त्ति)] फल (फल) मूल शब्द 1/1 त्ति (अ) = शब्दस्वरूप द्योतक सोक्ख (सोक्ख) 1/1 व (अ) = तथा दुक्ख (दुक्ख) 1/1 वा (अ) = अथवा ।

27 णाण = ज्ञान-(चेतना) । अत्थवियप्पो = पदार्थ का विचार । कम्म = कर्म-(चेतना) । जीवेण = जीव के द्वारा । ज = जो । समारद्ध = धारा गया

है । तमणेगविघ = त + अणेगविघ = वह, अनेक प्रकार । भणिद = कही गई है । फलत्ति = फल = (कर्म) - फल (चेतना) । मोक्ख = मुक्त । व = तथा । दुक्ख = दुःख । वा (अ) = अथवा ।

28 सव्वे (सव्व) 1/2 वि खलु (अ) = वाक्य की शोभा कम्मफल [(कम्म) - (फल) 2/1] थावरकाया (थावरकाय) 1/2 वि तसा (तम) 1/2 वि हि (अ) = पादपूरक कज्जजुद [(कज्ज) - (जुद) भूकृ 2/1 अनि] पाणित्तमदिवक्ता [(पाणित्त) + (आदिवक्ता)] पाणित्त(पाणित्त) 2/1 आदिवक्ता (आदिवक्त) भूकृ 1/2 अनि णाण (णाण) 2/1 विदति (विद) व 3/2 सक ते (त) 1/2 सवि जीवा (जीव) 1/2 ।

28 सव्वे = सभी । कम्मफल = कर्म के फल को । थावरकाया = स्थावर काय । तसा = तस । कज्जजुद = प्रयोजन से मिली हुई । पाणित्तमदिवक्ता = पाणित्त + अदिवक्ता = प्राणीत्व को, पार किए हुए । णाण = ज्ञान को । विदति = अनुभव करते हैं । ते = वे । जीवा = जीव ।

29 एदे (एद) 1/2 सवि जीवणिकाया [(जीव) - (णिकाय) 1/2] पचविहा (पचविह) 1/2 वि पुढविकाइयादीया [(पुढविकाइया) + (आदीया)] [(पुढविकाइय) - (आदीय) 1/2] मणपरिणामविरहिदा [(मण) - (परिणाम) - (विरह) भूकृ 1/2] जीवा (जीव) 1/2 एगेंदिया [(एग) + (इदिया)] [(एग) वि—(इदिया) 1/2] वि भणिया (भण) भूकृ 1/2 ।

29 एदे = ये । जीवणिकाया = जीव-समूह । पचविहा = पाच प्रकार । पुढविकाइयादीया = पुढविकाइय + आदीया = पृथिविकायिक, आदि । मण-परिणामविरहिदो = मन के प्रभाव में रहित । जीवा = जीव । एगेंदिया = एक इन्द्रियवाले । भणिया = कहे गये ।

30 अडेसु (अड) 7/2 पवड्ढता (पवड्ढ) वक्कु 1/2 गढभत्था (गढमत्थ) 1/2 माणुसा (माणुस) 1/2 य = तथा मुच्छगया [(मुच्छ)¹ - (गय) भूकृ 1/2 अनि] जारिसया (जारिस) 1/2 'य' स्वार्थिक तारिसया (तारिस) 1/2 जीवा (जीव) 1/2 एगेंदिया [(एग) + (इदिया)] [(एग) वि—(इदिय) 1/2] वि जेया (जेय) विघिकु 1/2 अनि ।

1 समास में दीर्घ का ह्रस्व (मुच्छा → मुच्छ) (हेम-प्राकृत व्याकरण, 1-4) ।

30 अण्डेसु = अण्डो मे । पवडढता = बढते हुए । गवभत्या = गर्भ मे स्थित ।
माणुसा = मनुष्य । य = तथा । मुच्छगया = वेहोश । जारिसया = जिस
प्रकार । तारिसया = उसी प्रकार । जीवा = जीव । एगेंदिया = एक
इन्द्रियवाले । भणिया = कहे गये ।

31 सवुक्कमादुवाहा [(सवुक्क)-(मादुवाह) 1/2] सखा (सख) 1/2
सिप्पी (सिप्पि) 1/2 अपादगा (अ-पादग) 1/2 वि य = और किमी
(किमि) 1/2 जाणति (जाण) व 3/2 सक रस (रस) 2/1 फास
(फास) 2/1 जे (ज) 1/2 सवि ते (त) 1/2 सवि वेइदिया [(वे)
वि-(इदिय) 1/2] वि] जीवा (जीव) 1/2 ।

31 सवुक्कमादुवाहा = शवूक, मातृवाह । सखा = शख । सिप्पी = सीप ।
अपादगा = बिना पैरवाले । य = और । किमी = कीट । जाणति = जानते
हैं । रस = रस को । फास = स्पर्श को । जे = जो । ते = वे । वेइदिया = दो
इन्द्रियवाले । जीवा = जीव ।

32 जूगागुभीमक्कणपिपीलिया [(जूगा)-(गुभी)-(मक्कण)-(पिपीलिया)
1/1] विच्छियादिया [(विच्छिय)+(आदिया)] [(विच्छिय)-
(आदिय) 1/2 'य' स्वाधिक] कीडा (कीड) 1/2 जाणति (जाण) व
3/2 सक रस (रस) 2/1 फास (फास) 2/1 गघ (गघ) 2/1 तेइदिया
[[ते)-(इदिय) 1/2] वि] जीवा (जीव) 1/2 ।

32 जूगागुभीमक्कणपिपीलिया = जू, कुम्मी, खटमल, चीटी । विच्छियादिया-
विच्छिय + आदिया = विच्छू, आदि । कीडा = कीडे । जाणति = जानते
हैं । रस = रस को । फास = स्पर्श को । गघ = गन्ध को । तेइदिया = तीन
इन्द्रियवाले । जीवा = जीव ।

33 उद्दसमसयमक्खियमधुकरभमरा [(उद्दस) - (मसय) - (मक्खिय)-
(मधुकर)-(भमरा) 1/2] पतगमादीया [(पतग)+(आदीया)]
पतग¹ (पतग) 2/1 आदीया (आदीय) 1/2 'य' स्वाधिक रूप (रूप)
2/1 रस (रस) 2/1 च (अ) = और गघ (गघ) 2/1 फास (फास)
पुण (अ) = पादपूरक । ते (स) 1/2 सवि विजाणति वि (अ) = अतः
जाणति (जाण) व 3/2 सक ।

1 कमी कभी प्रथमा के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है । (हेम
प्राकृत-व्याकरण, 3-137 वृत्ति) ।

33 उद्दसमसयमविलयमधुकरभमरा = मच्छर, डाम, मक्खी, मधुमक्खी, भोरा ।
पतगमादीया = पतग + आदीया = पतगा आदि । रूप = रूप को । रस =
रस को । च = और । गध = गध को । फास = स्पर्श को । पुण = पादपूरक ।
ते = वे । वि (अ) = अत । जाणति = जानने है ।

34 सुरणरणारयतिरिया [(सुर)-(णर)-(णारय) वि—(तिरिय) 1/2]
वण्णरसप्फासगघसद्दण्ह [(वण्ण)-(ग्म)-(प्फास)-(गघ)-(सद्द)-(
ण्ह) 1/2] जलचरयलचरखचरा [(जलचर)-(यलचर)-(खचर)
1/2] वलिया (वल) भूक 1/2 पचेदिया [(पच)-(उदिय) 1/2] वि
जीवा (जीव) 1/2 ।

34 सुरणरणारयतिरिय = देव, मनुष्य, नारकी, तिर्यञ्च । वण्णरसप्फासगघ-
सद्दण्ह = वर्ण, रस, स्पर्श, गन्ध और शब्द के जाननेवाले । जलचरयल-
चरखचरा = जल में गमन करनेवाले, स्थल पर गमन करनेवाले, आकाश
में गमन करनेवाले । वलिया = गतिशील । पचेदिया = पचेन्द्रिय ।
जीवा = जीव ।

35 जह = जिस प्रकार पउमरायरयण [(पउमराय)-(रयण) 1/1] खित्त
(खित्त) भूक 1/1 अणि खीर¹ (खीर) 2/1 पभासयदि (पभामयदि) व
3/1 सक अणि खीर (खीर) 2/1 तह (अ) = उसी प्रकार देही (देहि)
1/1 देहत्थो (देहत्य) 1/1 सदेहमत्त [(स)-(देह)-(मत्त) 2/1]

1 कभी-कभी द्वितीया विभक्ति का प्रयोग सप्तमी के अर्थ में भी किया
है । (हेम प्राकृत व्याकरण, 3—137) ।

35 जह = जिस प्रकार । पउमरायरयण = पद्मराग, रत्न । खित्त = डाला
हुआ । खीर = दूध को → दूध में । प्रभासयदि = प्रकाशित करता । खीर =
दूध को । तह = उसी प्रकार । देही = आत्मा । देहत्थो = देह में स्थित ।
सदेहमत्त = स्वदेह मात्र को । पभासयदि = प्रकाशित करता है ।

36-37-38

जो (ज) 1/1 मवि खलु (अ) = सचमुच, संसारत्थो (ससारत्थ) 1/1
वि जीवो (जीव) 1/1 तत्तो (अ) = उस कारण से दु (अ) = ही होदि
हो व 3/1 अक परिणामो (परिणाम) 1/1 परिणामादो (परिणाम) 5/1
कम्म (कम्म) 1/1 कम्मादो (कम्म) 5/1 होदि (हो) व 3/1 अक
गदिमु (गदि) 7/1 अणि गदो (गदि) 1/1 ।

गदमिधिगस्स [(गदि) + (अधिगस्स)] गदि (गदि) 2/1 अधिगदस्स¹
 (अधिगद) भूक 6/1 अनि देहो (देह) 1/1 देहादो (देह) 5/1 इदियाणि
 (इदिय) 1/2 जायते (जाय) व 3/2 सक तेहिं (त) 3/2 स दु (अ) =
 ही विसयग्गहण (विषय) - (ग्गहण) 1/1] तत्तो (अ) = उस कारण
 से रागो (राग) 1/1 वा (अ) = और दोसो (दोस) 1/1 ।

जायदि (जाय) व 3/1 सक जीवस्सेव [(जीवस्स) + (एव)] जीवस्स
 (जीव) 6/1 एव (अ) = इस प्रकार भावो (भाव) 1/1 ससारचक्क-
 वालम्मि [(ससार) - (चक्कवाल) 7/1] इदि (अ) = इस प्रकार
 जिणवरेहिं (जिणवर) 3/2 भणिदो (भण) भूक 1/1 अणादिणिघणो =
 अण + आदि + णिघणो = (अणादिणिघणो) 1/1 वि मणिघणो (स-णिघण)
 1/1 वि वा (अ) = या ।

1 कभी-कभी पण्ठी विभक्ति का प्रयोग पंचमी के स्थान पर पाया
 जाता है (हेम प्राकृत व्याकरण, 3-134) ।

36-37-38

जो = जो । खलु = सचमुच । ससारत्थो = ससार मे स्थित । जीवो =
 जीव । तत्तो = उस कारण से । दु = ही । होदि = उत्पन्न होता । परि-
 णामो = भाव । परिणाभादो = भाव से । कम्म = कर्म । कम्मादो = कर्म से ।
 होदि = होता है । गदिसु = गतियो मे । गदी = गमन ।

गदिमधिगस्स = गदि + अधिगस्स = गति को → गति मे, गए हुए (जीव)
 से । देहो = देह । देहादो = देह से । इदियाणि = इन्द्रियाँ । जायते =
 उत्पन्न होती हैं । तेहिं = उनके द्वारा । दु = ही । विसयग्गहण = विषयो का
 ग्रहण । तत्तो = उस कारण से । रागो = राग । वा = और । दोसो = द्वेष ।
 जायदि = उत्पन्न होता है । जीवस्सेव = जीवस्स + एव = जीव के, इस
 प्रकार । भावो = मनोभाव । ससारचक्कवालम्मि = आवागमन के समय
 (मे) । इदि = इस प्रकार । जिणवरेहिं = अर्हतो द्वारा । भणिदो = कहा
 गया है । अणादिणिघणो = आदिरहित, अन्तरहित । सणिघणो =
 अन्तसहित । वा = या ।

39 जेत्ति (ज) 6/2 विसयसु (विसय) 7/2 रदी (रदि) 1/1 तेत्ति
 (त) 6/2 म दुक्ख (दुक्ख) 1/1 विघाण (वियाण) विधि 2/1 सक
 सन्भाव (सन्भाव) 1/1 जदि (अ) = यदि त (त) 1/1 सवि ण (अ) =

न हि (अ) = क्योंकि सद्भाव (सद्भाव) 1/1 वावारो (वावार) 1/1
णत्थि (अ) = न विसयत्थ (विसयत्थ) चतुर्थी अर्थक 'अत्थ' अव्यय ।

39 जेसि = जिन के । विसयेसु = विषयो मे । रदी = रस । तेसि = उनके ।
दुक्ख = दुःख । वियाण = समझो । सद्भाव = वास्तविकता । जदि = यदि ।
त = वह । ए = न । हि = क्योंकि । सद्भाव = वास्तविकता । वावारो =
प्रवृत्ति । एत्थि = न । विसयत्थ = विषयो के लिए ।

40 तिपयारो [(ति) वि-(पयार) 1/1] सो (त) 1/1 सवि अप्पा
(अप्प) 1/1 परब्भितरवाहिरो [(पर) + (अब्भितर) + (वाहिरो)]
[(पर) वि-(अब्भितर) वि-(वाहिर) 1/1 वि] हु (अ) =
निस्सन्देह हेऊण¹ (हेउ) 6/2, तत्थ (अ) = उस अवस्था मे परो (पर)
1/1 वि भाइज्जइ (भा) व कर्म 3/1 सक अंतोवायेण [(अत) +
(उवायेण)] अंत (अ) = आंतरिक उवायेण (उवाय) 3/1 चयहि (चय)
विधि 2/1 सक वहिरप्पा (वहिरप्प) 2/1 अपभ्रश ।

1 कभी-कभी तृतीया के स्थान पर पष्ठी विभक्ति का प्रयोग पाया
जाता है (हेम प्राकृत व्याकरण, 3-134) ।

40 तिपयारो = तीन प्रकार का । सो = वह । अप्पा = आत्मा । परब्भितर-
वाहिरो = पर + अब्भितर + वाहिरो = परम, आन्तरिक, वहिर (आत्मा) ।
हु = निस्सन्देह । हेऊण = कारणो के → कारणो से । तत्थ = उस अवस्था मे ।
परो = परम । भाइज्जइ = ध्याया जाता है । अंतोवायेण = आंतरिक के
साधन से । चयहि = छोड़ो । वहिरप्पा = वहिरात्मा को ।

41. अक्खाणि (अक्ख) 1/2 वहिरप्पा (वहिरप्प) 1/1 अतरप्पा (अतरप्प)
1/1 हु (अ) = ही अप्पसकप्पो [(अप्प)-(सकप्प) 1/1] कम्म-
कलकविमुक्को [(कम्म)-(कलक-(विमुक्क) 1/1 वि] परमप्पा
(परमप्प) 1/1 भण्णए (भण्ण) व कर्म 3/1 सक अग्नि देवो (देव) 1/1 ।

41 अक्खाणि = इन्द्रियाँ । वहिरप्पा = वहिरात्मा । अतरप्पा = अतरात्मा ।
हु = ही । अप्पसकप्पो = आत्मा की विचरणा । कम्मकलकविमुक्को = कर्म-
कलक से मुक्त । परमप्पा = परम आत्मा । भण्णए = कहा गया ।
देवो = देव ।

42 आरुहवि (आरुह) सक्र अपभ्रश अतरप्पा (अतरप्प) 2/1 अपभ्रश
वहिरप्पा (वहिरप्प) 2/1 अपभ्रश छडिऊण (छड) सक्र तिविहेण

(तिविह) 3/1 भाइज्जइ (भा) व कर्म 3/1 सक परमप्पा (परमप्पा)
1/1 उवइट्ठ (उवइट्ठ) 1/1 वि । जिणवर्दिदेहि (जिणवर्दिद) 3/2 ।

42 आरुह्वि = ग्रहण करके । अतरप्पा = अन्तरात्मा को । बहिरप्पा = बहिरात्मा को । छडिऊण = छोड़कर । तिविहेण = तीन प्रकार से । भाइज्जइ = दयाया जाता है । परमप्पा = परमात्मा । उवइट्ठ = कहा गया । जिणवर्दिदेहि = अरहतो द्वारा ।

43 जो (ज) 1/1 सवि पस्सदि (पस्स) व 3/1 सक अप्पाणं (अप्पाण) 2/1 अवद्धपुट्ठ [(अवद्ध) + (अपुट्ठ)] [(अवद्ध) भूक अनि-(अपुट्ठ) भूक 2/1 अनि] अणणय (अणण) 2/1 वि स्वार्थिक 'य' प्रत्यय नियद (नियद) 2/1 वि अविसेसमसंजुत्तं [(अविसेस) + (असजुत्त)] अविसेस (अविसेस) 2/1 वि असजुत्त (असजुत्त) भूक 2/1 अनि त (त) 2/1 सवि सुद्धनय (सुद्धनय) 2/1 वियाणाहि¹ (वियाण) विधि 2/1 सक ।

1 आज्ञार्थक या विधि अर्थक प्रत्ययो के होने पर कभी-कभी अन्त्यस्थ 'अ' के स्थान पर 'आ' की प्राप्ति देखी जाती है (हेम-प्राकृत व्याकरण, 3-158 वृत्ति)

43 जो = जो । पस्सदि = देखता है । अप्पाण = आत्मा को । अवद्धपुट्ठ = वध से रहित, न छुआ हुआ । अणणय = अद्वितीय । नियद = स्थायी । अविसेसमसंजुत्त = अविसेस + असजुत्त = भेद से रहित, अमिश्रित । त = उसको । सुद्धनय = शुद्धनय (को) । वियाणाहि = जानो ।

44 अरसमरूवमगघ [(अरस) + (अरूव) + (अगघ)] अरस (अरस) 1/1 वि अरूव (अरूव) 1/1 वि अगघ (अगघ) 1/1 वि अव्वत्त (अव्वत्त) 1/1 वि च्चेयणागुणमसद् [(च्चेयणा) + (गुण) + (असद्)] [(च्चेयणा) - (गुण) 1/1] असद् (असद्) 1/1 वि जाणमल्लिगगहण [(जाण) + (अल्लिग) + (गहण)] जाण (जाण) 1/1 [(अल्लिग) वि - (गहण) 1/1] जीवमणिहिट्ठसठाण [(जीव) + (अणिहिट्ठ) + (सठाण)] जीव (जीव) 1/1 [(अणिहिट्ठ) वि - (सठाण) 1/1] ।

44 अरसमरूवमगघ = अरस + अरूव + अगघ = रसरहित, रूपरहित, गघ-रहित । अव्वत्त = अदृश्यमान । च्चेयणागुणमसद् = चेतना, स्वभाव, शब्द-रहित । जाणमल्लिगगहण = जाण + अल्लिग + गहण = ज्ञान, बिना किसी

चिह्न के, ग्रहण । जीवमणिद्दिसठाण = जीव + अणिद्दित्ठ + सठाण =
आत्मा, अप्रतिपादित, आकार ।

- 45 ववहारोऽभूदत्थो [(ववहारो) + (अभूदत्थो)] ववहारो (ववहार) 1/1
अभूदत्थो (अभूदत्थ) 1/1 वि भूदत्थो (भूदत्थ) 1/1 वि देसिदो (देस)
भूक 1/1 दु (अ) = ही सुद्धणओ [(सुद्ध) वि - (णअ) 1/1]
भूदत्थमस्सिदो [(भूदत्थ) + (अस्सिदो)] भूदत्थ¹ (भूदत्थ) 2/1 अस्सिदो
(अस्सिदो) 1/1 भूक अनि खलु (अ) = ही सम्मादिट्ठी (सम्मादिट्ठी)
1/1 वि हवदि (हव) व 3/1 अक जीवो (जीव) 1/1 ।

1 कभी कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया
जाता है । (हेम-प्राकृत-व्याकरण, 3-137) या 'अस्सिद' कर्म के
साथ कर्तृवाच्य में प्रयुक्त होता है (आप्टे, संस्कृत-हिन्दी कोश) ।

- 45 ववहारोऽभूदत्थो = व्यवहार, अवास्तविक । भूदत्थो = वास्तविक ।
देसिदो = कहा गया । दु = ही । सुद्धणओ = शुद्धनय । भूदत्थमस्सिदो =
वास्तविकता पर आश्रित । खलु = ही । सम्मादिट्ठी = सम्यदृष्टि ।
हवदि = होता है । जीवो = जीव ।

- 46 जीवे¹ (जीव) 7/1 कम्म (कम्म) 1/1 वद्ध (वद्ध) भूक 1/1 अनि
पुट्ठ (पुट्ठ) भूक 1/1 अनि चेदि [(च) + (इदि)] च (अ) = और
इदि (अ) = इस प्रकार ववहारणयभणिद [(ववहारणय) - (भण) भूक
1/1] सुद्धणयस्स (सुद्धणय) 6/1 दु (अ) = किन्तु अवद्धपुट्ठं [(अवद्ध)
+ (अपुट्ठ)] [(अवद्ध) भूक अनि - (अपुट्ठ) भूक 1/1 अनि] हवदि
(हव) व 3/1 अक कम्म (कम्म) 1/1 ।

1 कभी कभी तृतीया के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया
जाता है (हेम-प्राकृत-व्याकरण, 3-135) ।

- 46 जीवे = जीव में → जीव के द्वारा । कम्म = कम्म । वद्ध = बाँधा हुआ ।
पुट्ठ = पकड़ा हुआ । चेदि = और, इस प्रकार । ववहारणयभणिद =
व्यवहारणय के द्वारा, कहा गया । सुद्धणयस्स = शुद्धनय के । दु = ही ।
जीवे = जीव के द्वारा । अवद्धपुट्ठ = न बाँधा हुआ, न पकड़ा हुआ ।
हवदि = होता है । कम्म = कर्म ।

- 47 कम्म (कम्म) 1/1 वद्धमवद्ध [(वद्ध) + (अवद्ध)] वद्ध (वद्ध) भूक
1/1 अनि अवद्ध (अवद्ध) भूक 1/1 अनि जीवे¹ (जीव) 7/1 एद (एद)

2/1 सवि तु (अ) = तो जाण (जाण) विधि 2/1 सक णयपक्ख
 [(णय) - (पक्ख) 2/1] णयपक्खातिक्कतो [(णय) + (पक्ख) +
 (अतिक्कतो)] [(णय) - (पक्ख) - (अतिक्कतो) 1/1 वि] भण्णदि
 (भण्णदि) व कर्म 3/1 सक अनि जो (ज) 1/1 सवि सो (त) 1/1 सवि
 समयसारो (समयसार) 1/1 ।

1 कभी कभी तृतीया के स्थान पर सप्तमी का प्रयोग पाया जाता है
 (हेम प्राकृत व्याकरण, 3-155) ।

47 कम्म = कर्म । बद्धमवद्ध = बद्ध + अवद्ध = बाँधा गया, न बाँधा गया ।
 जीवे = जीव मे → जीव के द्वारा । एद = इसको । तु = तो । जाण =
 जानो । णयपक्ख = नय की दृष्टि । णयपक्खातिक्कतो = नय की दृष्टि से
 अतीत । भण्णदि = कहा गया । जो = जो । सो = वह । समयसारो =
 समयसार ।

48 जीवो (जीव) 1/1 ववगदमोहो [(ववगद) भूकृ अनि—(मोह) 1/1]
 उवलद्धो¹ (उवलद्ध) भूकृ 1/1 अनि तच्चमप्पणो [(तच्च) + (अप्पणो)]
 तच्च (तच्च) 2/1 अप्पणो (अप्प) 6/1 सम्म (अ) = पूर्णत जहदि
 (जह) व 3/1 सक जदि (अ) = यदि रागदोसे [(राग)—(दोस)
 2/2] सो (त) 1/1 सवि अप्पाण (अप्पाण) 2/1 लहदि (लह) व 3/1
 सक सुद्ध² (सुद्ध) भूकृ 2/1 अनि ।

1 'उवलद्ध' = इसका प्रयोग कर्तृवाच्य मे हुआ है । यह विचारणीय है ।

48 जीवो = व्यक्ति ने । ववगदमोहो = मोह समाप्त किया गया । उवलद्धो =
 प्राप्त किया । तच्चमप्पणो = तच्च + अप्पणो = सार को, आत्मा के ।
 सम्म = पूर्णत । जहदि = छोड़ देता है । जदि = यदि । रागदोसे = राग-
 द्वेष को । सो = वह । अप्पाण = अपने । लहदि = प्राप्त कर लेता है →
 प्राप्त कर लेगा । सुद्ध = शुद्ध स्वरूप को ।

49 जो (ज) 1/1 सवि एव (अ) = इस प्रकार जाणित्ता (जाण) सकृ भ्रादि (भा) व 3/1 सक पर (पर) 2/1 वि अप्पण (अप्प) 2/1 म्वाधिक 'ग' प्रत्यय विमुद्धप्पा [(विमुद्ध)वि-(अप्प) 1/1] सागाराणागारो [(सागार)+(अणगारो)] [सागार)-(अणगार) 1/1] खवेदि (खव) व 3/1 सक सो (त) 1/1 मवि मोहदुग्गठि [(मोह)-(दुग्गठि) 2/1] ।

49 जो = जो । एव = इस प्रकार । जाणित्ता = समझकर । भ्रादि = ध्यान करता है । पर = उच्चतम (को) । अप्पण = आत्मा को । विमुद्धप्पा = शुद्धात्मा । सागाराणागारो = सागार + अणगारो = गृहस्थ व मुनि । खवेदि = नष्ट कर देता है । सो = वह । मोहदुग्गठि = मोह की जटिल गाँठ को ।

50 एणह [(ण) + अह]] ण = नहीं अह (अम्ह) 1/1 स होमि (हो) व 3/1 अक परेसि (पर) 6/2 वि मे (अम्ह) 6/1 म परे¹ (पर) 2/2 वि सन्ति (अस) व 3/2 अक णाणमहमेवको [(णाण) + (अह) + (एक्को)] णाण (णाण) 1/1 अह (अम्ह) 1/1 म एक्को (एक्क) 1/1 सवि इदि (अ) = इस प्रकार जो (ज) 1/1 सवि भायदि (भाय) व 3/1 सक भाणे (भाण) 1/1 सो (त) 1/1 मवि अप्पाण (अप्पाण) 2/1 हवदि (हव) व 3/1 अक भादा (भाउ) 1/1 वि ।

1 कभी-कभी प्रथमा के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है ।
(हेम-प्राकृत व्याकरण, 3-137 वृत्ति) ।

50 णह = ण + अह = नहीं, मैं । होमि = हूँ । परेसि = पर के । एण = नहीं । मे = मेरे । परे = पर को → पर । सन्ति = हैं । एणमहमेवको = णाण + अह + एक्को = ज्ञान, मैं, केवल मात्र । इदि = इस प्रकार । जो = जो । भायदि = ध्याता है । भाणे = ध्यान मे । सो = वह । अप्पाण = आत्मा को । हवदि = होता है । भादा = ध्याता ।

51 देहा (देह) 1/2 वा (अ) = एव दविणा (दविण) 1/2 सुहदुक्खा [(सुह)-(दुक्ख) 1/2] वाऽघ [(वा) + (अघ)] वा (अ) = एव अघ (अ) = अच्छा तो सत्तुमित्तजणा [(सत्तु)-(मित्त)-(जण) 1/2] जीवस्स (जीव) 6/1 ण (अ) = नहीं सति (अस) व 3/2 अक धुवा (धुव) 1/2 वि धुवोवओगप्पगो [(धुव) + (उवओगप्पगो)] [(धुव) वि-(उवओगप्पगो) 1/1 वि] अप्पा (अप्प) 1/1 ।

- 51 बेहा = शरीर । बा = एव । दविणा = घनादि वस्तुएँ । सुहदुखा = सुख और दुःख । बाऽघ = बा + अघ = एव, अच्छा तो । सत्तुमित्तजणा = शत्रु, मित्रजन । जीवस्स = व्यक्ति के । एण = नहीं । सति = रहते हैं । धुवा = स्थायी । धवोवओगप्पगो = धुव + उवओगप्पगो = स्थायी, उपयोगमयी । अप्पा = आत्मा ।
- 52 एव = इस प्रकार णाणप्पाण (णाणप्पाण) 2/1 वि दसणभूद [(दसण)-(भूद) भूकृ 2/1 अनि] अदिदियमहत्थ [(अदिदिय)-(महत्थ) 2/1] धुवमचलमणालव [(धुव) + (अचल) + अणालव] धुव (धुव) 2/1 वि अचल (अचल) 2/1 वि अणालव (अणालव) 2/1 वि मण्णेऽह [मण्णे) + (अह)] मण्णे (मण्णे) व 1/1 सक अनि अह (अम्ह) 1/1 स अप्पग (अप्प) 2/1 'ग' स्वार्थिक प्रत्यय सुद्ध (मुद्ध) 2/1 वि ।
- 52 एव = इस प्रकार । णाणप्पाण = ज्ञानस्वभाववाला । दसणभूद = दर्शनमयी । अदिदियमहत्थ = अतीन्द्रिय, श्रेष्ठ पदार्थ । धुवमचलमणालव = धुव + अचल + अणालव = स्थायी, स्थिर, आलवनरहित । मण्णेऽह = समभक्ता हैं, मैं । अप्पग = आत्मा को । सुद्ध = शुद्ध ।
- 53 आदा (आद) 1/1 णाणपमाण [(णाण)-(पमाण) 1/1] णाण (णाण) 1/1 णेयप्पमाणमुद्दिट्ठ [(णेय) + (प्पमाण) + (उद्दिट्ठ)] [(णेय) विधि कृ अनि-(प्पमाण) 1/1] उद्दिट्ठ (उद्दिट्ठ) भूकृ 1/1 अनि णेय (णेय) विधि कृ 1/1 अनि लोगालोग [(लोग) + (अलोग)] [(लोग)-(अलोग) 1/1] तम्हा (अ) = इसलिए णाण (णाण) 1/1 तु (अ) = तो सब्बगय [(सब्ब) वि-(गय) भूकृ 1/1 अनि] ।
- 53 आदा = आत्मा । णाणपमाण = ज्ञान जितना । णेयप्पमाणमुद्दिट्ठ = णेय + प्पमाण + उद्दिट्ठ = ज्ञेय, जितना, कहा गया । णेय = ज्ञेय । लोगालोग = लोग + अलोग = लोक, अलोक । तम्हा = इसलिए । णाण = ज्ञान । तु- (अ) = तो । सब्बगय = सब जगह विद्यमान ।
- 54 णाण (णाण) 1/1 अप्पत्ति [(अप्प) + (इति)] अप्प¹ (अप्प) 1/1 इति (अ) = इस प्रकार मदं (मद) भूकृ 1/1 अनि वट्ठदि (वट्ठ) व 3/1 अक णाण (णाण) 1/1 विणा² (अ) = बिना ण (अ) = नहीं अप्पाण² (अप्पाण) 2/1 तम्हा (अ) = इसलिए णाण (णाण) 1/1 अप्पा (अप्प) 1/1 अप्पा (अप्प) 1/1 णाण (णाण) 1/1 व (अ) = तथा अण्ण (अण्ण) 1/1 वि वा (अ) = भी ।

- 1 यहा 'अप्पा' का 'अप्प' हुआ है। आगे 'त्ति' सयुक्त अक्षर होने से अप्पा का अप्प हुआ है (हैम-प्राकृत-व्याकरण, 1-84)।
- 2 विना के योग में द्वितीया, तृतीया या पंचमी विभक्ति होती है।

54 णाण = ज्ञान। अप्पत्ति = आत्मा, इस प्रकार। मदं = स्वीकृत। वट्टदि = होता है। णाण = ज्ञान। विणा = विना। ण = नहीं। अप्पाणं = आत्मा के। तम्हा = इसलिए। णाणं = ज्ञान। अप्पा = आत्मा। अप्पा = आत्मा। णाण = ज्ञान। व = तथा। अण्ण = अन्य। वा = भी।

55 जो = (ज) 1/1 सवि जाणदि (जाण) व 3/1 सक सो (त) 1/1 सवि णाणं (णाण) 1/1 ण (अ) = नहीं हवदि (हव) व 3/1 अक णाणेण (णाण) 3/1 जाणगो (जाणग) 1/1 वि आदा (आद) 1/1 णाण (णाण) 1/1 परिणमदि (परिणम) व 3/1 अक सय (अ) = स्वयं अट्ठा (अट्ठ) 1/2 णाणट्ठिया [(णाण)-(ट्ठिय) भूक 1/2 अनि] सब्बे (सब्ब) 1/2 वि।

55 जो = जो। जाणदि = जानता है। सो = वह। णाण = ज्ञान। ण (अ) = नहीं। हवदि = होता है। णाणेण = ज्ञान के द्वारा। जाणगो = जानने-वाला। आदा = आत्मा। णाणं = ज्ञान। परिणमदि = रूपान्तरित होता है। सय = स्वयं। अट्ठा = पदार्थ। णाणट्ठिया = ज्ञान में स्थित। सब्बे = सब।

56 तिक्कालणिच्चविसम [(तिक्काल)-(णिच्च)-(विसम) 1/1 वि] सयलं (सयल) 2/1 वि सब्बत्थ (अ) = हर समय सभव (सभव) 2/1 चित्त (चित्त) 2/1 वि जुगव (अ) = एक साथ जाणदि (जाण) व 3/1 सक जोण्ह (जोण्ह) 1/1 अहो (अ) = हे मनुष्यो। हि (अ) निश्चयपूर्वक णाणस्स (णाण) 6/1 माहप्प (माहप्प) 1/1।

56 तिक्कालणिच्चविसमं = तीनो कालो में, अविनाशी, अनुपम। सयल = सम्पूर्ण को। सब्बत्थ = हर समय। सभव = समावनाओ को। चित्त = विविध (को)। जुगव = एक साथ। जाणदि = जानता है। जोण्ह = प्रकाश। अहो = हे। हि = निश्चयपूर्वक। णाणस्स = ज्ञान की। माहप्प = महिमा।

57 णत्थि (अ) = नहीं है परोक्ख (परोक्ख) 1/1 किंचिवि (अ) = कुछ भी समत (अ) = सब ओर से सब्बखल्लगुणसमिद्धस्स [(सब्ब) +

(अक्ख) + (गुण) + (समिद्धस्स)] [(सव्व) - (अक्ख) - (गुण) - (समिद्ध) भूक 4/1 अनि] अक्खातीदस्स [(अक्ख) + (अतीदस्स)] [(अक्ख) - (अतीद) 4/1] सदा (अ) = सदा सयमेव [(सय) + (एव)] सय(अ) = स्वय एव (अ) = ही हि (अ) = निस्सदेह णाणजादस्स [(णाण) - (जाद) भूक 4/1] ।

57 एत्थि = नहीं है । परोक्ख = परोक्ष । किंचिवि = कुछ भी । समत = सब ओर से । सव्वक्खगुणसमिद्धस्स = सब इन्द्रियो के गुणों से सम्पन्न (व्यक्ति) के लिए । अक्खातीदस्स = सब इन्द्रियो से परे पहुँचे हुए (ज्ञान) के लिए । सदा = सदा । सयमेव = स्वय ही । हि = निस्सदेह । णाणजादस्स = ज्ञान को प्राप्त (व्यक्ति) के लिए ।

58. गेण्हवि (गेण्ह) व 3/1 सक णेव (अ) = न ही ण (अ) = न मुचदि (मुच) व 3/1 सक पर (पर) 2/1 वि परिणमदि (परिणम) व 3/1 अक केवली (केवलि) 1/1 भगव (भगव) 1/1 पेच्छदि (पेच्छ) व 3/1 सक समतदो (अ) = सब ओर से सो (त) 1/1 सवि जाणदि (जाण) व 3/1 सक सव्व (सव्व) 2/1 सवि णिरवसेस (क्खिविअ) = पूर्ण रूप से ।

58 गेण्हदि = करता है → करते हैं । णेव = न ही । ए = न । मुचदि = छोड़ते हैं । ण = नहीं । परिणमदि = रूपान्तरित होते हैं । केवली = केवली । भगव = भगवान । पेच्छदि = देखते हैं । समतदो = सब ओर से । सो = वह → वे । जाणदि = जानते हैं । सव्व = सब को । णिरवसेस = पूर्ण रूप से ।

59 सोक्ख (सोक्ख) 1/1 वा (अ) = अथवा पुण (अ) = पादपूरक दुक्ख (दुक्ख) 1/1 केवलणाणिस्स (केवलणाणि) 6/1 णत्थि (अ) = नहीं है → होता है देहगद [(देह) - (गद) भूक 1/1 अनि] जम्हा (अ) = चूकि अदिदियत्त (अदिदियत्त) 1/1 जाव (जा) भूक 1/1 तम्हा (अ) = इसलिए दु (अ) = ही त (त) 1/1 सवि णेय (णेय) विधि क 1/1 अनि ।

59 सोक्ख = सुख । वा = अथवा । पुण (अ) = पादपूरक । दुक्ख = दुःख । केवलणाणिस्स = केवलज्ञानी के । णत्थि = नहीं होता है । देहगद = शरीर के द्वारा प्राप्त । जम्हा = चूकि । अदिदियत्त = अतीन्द्रियता । जाव =

उत्पन्न हुई । तम्हा = इमलिए । तु = ही । त = वह । जेय = समझने योग्य ।

60 अत्थि (अ) = है अमुत्त (अमुत्त) 1/1 वि मुत्त (मुत्त) 1/1 वि अदिदिय (अदिदिय) 1/1 वि इदिय (इदिय) 1/1 वि च (अ) = तथा अत्थेसु (अत्थ) 7/2 णाण (णाण) 1/1 च (अ) = और तथा (अ) = इसी तरह सोक्ख (सोक्ख) 1/1 ज (ज) 1/1 सवि तेसु (त) 7/2 स पर (पर) 1/1 वि च (अ) = इसलिए त (त) 1/1 मवि जेय (जेय) विवि क्क 1/1 अनि ।

60 अत्थि(अ) = है । अमुत्त = मूर्च्छारहित । मुत्त = मूर्च्छायुक्त । अदिदिय = अतीन्द्रिय । इदिय = इन्द्रिय-ज्ञान । च = तथा । अत्थेसु = पदार्थों के विषय मे । णाण = ज्ञान । च तथा = और इसी तरह । सोक्ख = मुख । ज = जो । तेसु = उनमे । पर = श्रेष्ठ । च = इसलिए । त = वह । जेय = समझने योग्य ।

61 ज (ज) 1/1 सवि केवलत्ति [(केवल) + (इति)] केवल (केवल) मूल शब्द 1/1 वि इति (अ) स्पष्टीकरण णाण (णाण) 1/1 त (त) 1/1 सवि सोक्ख (सोक्ख) 1/1 परिणम¹ (परिणम) 2/1 च = निस्सन्देह सो (त) 1/1 सवि चेव = ही खेदो (खेद) 1/1 तस्स (त) 6/1 स ण (अ) = नहीं भणिदो (भण) भूक्क 1/1 जम्हा (अ) = चूक घादी (घादि) 1/2 वि खय (खय) 2/1 जादा (जा) भूक्क 1/2 ।

1 द्वितीया का प्रयोग प्रथमा अर्थ मे हुआ है । (हेम प्राकृत व्याकरण, वृत्ति 3-137) तथा परिणाम का परिणम किया गया है (हेम प्रा व्या. वृत्ति 1-67)

61 ज = जो । केवल = केवल । णाण = ज्ञान । त = वह । सोक्ख = मुख । परिणम = रूपान्तरण । च = निस्सन्देह । सो = वह । चेव = ही । खेदो = खेद । तस्स = उसके । ण = नहीं । भणिदो = कहा गया । जम्हा = चूक । घादी = घातिया कर्म । खय = क्षय को । जादा = प्राप्त हुए हैं ।

62 जाद (जाद) भूक्क 1/1 अनि सय (प) = आप से आप समत्तं (अ) = पूर्ण णाणमणतत्थवित्थिद [(णाण) + (अणत) + (अत्थ) + (वित्थिद)] णाण (णाण) 1/1 [(अणत) वि - (अत्थ) - (वित्थिद) 1/1 वि] विमल (विमल) 1/1 वि रहिद (रहिद) 1/1 वि तु (अ) = और

उगहादिहि [(उगह) + (आदिहि)] [(उगह) - (आदि) 3/2]
 सुहृत्ति [(सुह) + (इति)] सुह (सुह) मूलशब्द 1/1 इति (अ) =
 स्पष्टीकरण एयतिय (एयतिय) 1/1 वि भणिद (भण) भूकृ 1/1 ।

62 जाद = उत्पन्न हुआ । सय = आप से आप । समत्त = पूर्ण । णाणमणतत्थ-
 वित्थिद = णाण + अणत्त + अत्थ + वित्थिद = ज्ञान, अनन्त पदार्थों में फैला
 हुआ । विमल = शुद्ध । रहिद = रहित । तु = और । उगहादिहि =
 अवग्रह आदि से । सुहृत्ति = सुख । एयतिय = अद्वितीय । भणिद =
 कहा गया ।

63 जादो (जा) भूकृ 1/1 सय (अ) = स्वय स (त) 1/1 सवि चेदा (चेदा)
 8/1 सव्वण्ह (सव्वण्ह) 1/1 सव्वलोगदरसी [(सव्व) - (लोग) -
 (दरसि) 1/1 वि] य (अ) = और पप्पोदि (पप्पोदि) व 3/1 सक अनि
 सुहमणत्त [(सुह) + (अणत्त)] सुह (सुह) 2/1 अणत्त (अणत्त) 2/1 वि
 अग्वावाध (अग्वावाध) 2/1 वि सगममुत्त [(सग) + (अमुत्त)] सग
 (सग) 2/1 वि अमुत्त (अमुत्त) 2/1 वि ।

63 जादो = हुआ । सय = स्वय । स = वह । चेदा = हे मनुष्य । सव्वण्ह =
 जिन । सव्वलोगदरसी = सब लोक को देखनेवाला । य = और । पप्पोदि =
 प्राप्त करता है । सुहमणत्त = सुख, अनन्त । अग्वावाध = बाधा-रहित ।
 सगममुत्त = सग + अमुत्त = निजी, इन्द्रियातीत ।

64 तिमिरहरा [(तिमिर) - (हर → हरा स्त्री) 1/1 वि] जइ (अ) = यदि
 दिट्ठी (दिट्ठी) 1/1 जणस्स (जण) 6/1 दीवेण (दीव) 3/1 एत्थि
 (अ) = नहीं कादव्व (का) विधि कृ 1/1 तध (अ) = उसी प्रकार
 सोक्ख (सोक्ख) 1/1 सयमादा [(सय) + (आदा)] सय (अ) = स्वय
 आदा (आद) 1/1 विसया (विसय) 1/2 किं (क) 1/1 सवि तत्थ
 (अ) = वहा पर कुव्वति (कुव्व) व 3/2 सक ।

64 तिमिरहरा = अघेपन को हटानेवाली । जइ = यदि । दिट्ठी = आख ।
 जणस्स = मनुष्य की । दीवेण = दीपक के द्वारा । एत्थि = नहीं ।
 कादव्व = किये जाने योग्य । तध = उसी प्रकार । सोक्ख = सुख ।
 सयमादा = स्वय आत्मा । विसया = विषय । किं = क्या प्रयोजन । तत्थ =
 वहा । कुव्वति = करते हैं → करेंगे ।

तिमिर = अघापन, आप्टे, संस्कृत हिन्दी कोश ।

65 सयमेव [(सय) + (एव)] सय (अ) = स्वय एव (अ) = ही जघादिच्चो
 [(जघा) + (आदिच्चो)] जहा (अ) = जिम प्रकार आदिच्चो (आदिच्च)
 1/1 तेजो (तेज) 1/1 उण्हो (उण्ह) 1/1 य (अ) = तथा देवदा
 (देवदा) 1/1 एभसि (णभसि) 7/1 अनि सिद्धोवि [(सिद्धो) + (अपि)]
 सिद्धो (सिद्ध) 1/1 अपि (अ) = भी तथा = उसी प्रकार एणं (णाण)
 1/1 सुह (सुह) 1/1 च (अ) = और लोगे (लोग) 7/1 तथा (अ) =
 तथा देवो (देव) 1/1 वि ।

65 सयमेव = स्वय ही । जघादिच्चो = जिम प्रकार सूर्य । तेजो = प्रकाश ।
 उण्हो = उष्ण । य = तथा । देवदा = दिव्य शक्ति । एभसि = आकाश मे ।
 सिद्धोवि = सिद्ध भी । तथा = उसी प्रकार । एणं = ज्ञान । सुह = सुख ।
 च = और । लोगे = लोक मे । तथा = तथा । देवो = दिव्य ।

66 परिणमदि (परिणम) व 3/1 अक जदा (अ) = जव अप्पा (अप्प) 1/1
 सुहम्मि (सुह) 7/1 असुहम्मि (असुह) 7/1 रागदोसजुदो [(राग)-
 (दोस)-(जुद) भूकृ 1/1 अनि] त¹ (त) 2/1 सवि पविसदि (पविस)
 व 3/1 सक कम्मरय [(कम्म)-(रय) 1/1] णाणावरणादिभावेहि
 [(णाणावरण) + (आदि) + (भावेहि)] [(णाणावरण)-(आदि)-
 (भाव) 3/2]

1 'गमन' अर्थवाली क्रिया (पविसदि) के साथ द्वितीया हुआ है ।

66 परिणमदि = रूपान्तरित होता है । जदा = जव । अप्पा = आत्मा ।
 सुहम्मि = शुभ मे । असुहम्मि = अशुभ मे । रागदोसजुदो = राग-द्वेष से
 जकड़ा हुआ । त = उसको → उसमे । पविसदि = प्रवेश करता है ।
 कम्मरय = कर्मरज । णाणावरणादिभावेहि = ज्ञानावरणादि रूप परिणामो
 द्वारा ।

67 ज (ज) 2/1 सवि कुणदि (कुण) व 3/1 सक भावसादा [(भाव) +
 (आदा)] भाव (भाव) 2/1 आदा (आद) 1/1 कत्ता (कत्तु) 1/1 वि
 सो (त) 1/1 सवि होदि (हो) व 3/1 अक तस्स (त) 6/1 स भावस्स
 (भाव) 6/1 कम्मत्त (कम्मत्त) 2/1 परिणमदे (परिणम) व 3/1 सक
 तम्मिह (त) 7/1 स सय (अ) = अपने आप पोगल (पोगल) 1/1 दब्ब
 (दब्ब) 1/1 ।

67 ज = जिस (को) । कुणदि = उत्पन्न करता है । भावमादा = भाव को, आत्मा । कता = कर्ता । सो = वह । होदि = होता है । तस्स = उस (का) । भावस्स = भाव का । कम्मत्त = कर्मत्व को । परिणमदे = प्राप्त करता है । तम्हि = उसके होने पर । सय = अपने आप । पोग्गल = पुद्गल । दव्व = द्रव्य ।

68 अण्णाणी (अण्णाणि) 1/1 वि पुण (अ) = और रत्तो (रत्त) भूक 1/1 अणि हि (अ) = निस्सन्देह सव्वदव्वेसु [(सव्व)-(दव्व) 7/2] कम्ममज्झगदो [(कम्म)-(मज्झ)-(गद) भूक 1/1 अणि] लिप्पदि (लिप्पदि) व कर्म 3/1 सक अणि कम्मरयेण [(कम्म)-(रय) 3/1] दु (अ) = अत कद्दममज्झे [(कद्दम)-(मज्झ) 7/1] जहा (अ) = जिस प्रकार लोह (लोह) 1/1 ।

68 अण्णाणी = अज्ञानी । पुण = और । रत्तो = आसक्त । हि = निस्सन्देह । सव्वदव्वेसु = सब वस्तुओं में । कम्ममज्झगदो = कर्म के मध्य में फसा हुआ । लिप्पदि = मलिन किया जाता है । कम्मरयेण = कर्मरूपी रज से । दु = अत । कद्दममज्झे = कीचड़ में (पड़ा हुआ) । जहा = जिस प्रकार । लोह = लोहा ।

69 आदा (आद) 1/1 कम्ममलिसो [(कम्म) - (मलिस) 1/1 वि] धारदि (धार) व 3/1 सक पाणे (पाण) 2/2 पुणो पुणो (अ) = बार-बार अण्णे (अण्ण) 2/2 वि ण (अ) = नहीं जहदि (जह) व 3/1 सक जाव = जब तक ममत्त (ममत्त) 2/1 देहपघाणेसु [(देह) - (पघाण) 7/2 वि] विसएसु (विसअ) 7/2 ।

69 आदा = आत्मा । कम्ममलिसो = कर्मों से मलिन । धारदि = धारण करती है । पाणे = प्राणों को । पुणो पुणो = बार-बार । अण्णे = नवीन । ण = नहीं । जहदि = छोड़ती है । जाव = जब तक । ममत्त = ममत्व को । देहपघाणेसु = मूल में शरीर । विसएसु = विषयो में ।

70 वत्थु (वत्थु) 2/1 पडुच्च (अ) = आश्रय करके त (त) 1/1 सवि पुण (अ) = फिर अज्झवसाण (अज्झवसाण) 1/1 तु (अ) = निस्सन्देह होदि (हो) व 3/1 अक जीवाण (जीव) 6/2 ण (अ) = नहीं हि (अ) = वास्तव में वत्थुदो (वत्थु) पचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय दु (अ) =

तो भी वधो (वध) 1/1 अजभवसाणेण (अजभवसाण) 3/1 वधो (वध)
1/1 त्ति (अ) = अत ।

70 वत्थु = वस्तु को । पडुच्च = आश्रय करके । त = वह । पुण = फिर ।
अजभवसाण = विचार । तु = निस्सदेह । होदि = होता है । जीवाण =
जीवो के । ण = नहीं । हि = वास्तव में । वत्थुदो = वस्तु में । दु = तो
भी । वधो = वध । अजभवसाणेण = विचार से । वधो = वध । त्ति =
अत ।

71 रत्तो (रत्त) भूक 1/1 अनि वधदि (वध) व 3/1 सक कम्म (कम्म)
1/1 मुच्चदि (मुच्चदि) व कर्म 3/1 सक अनि कम्मोहि (कम्म) 3/2
रागरहिदप्पा [(राग) + (रहिद) + (अप्पा)] [(राग) - (रहित)
वि - (अप्प) 1/1] एसो (एत) 1/1 सवि वधसमासो [(वध) -
(समास) 1/1] जीवाण (जीव) 6/2 जाण (जाण) विधि 2/1 सक
णिच्छयदो (णिच्छय) पचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय ।

71 रत्तो = आसक्त । वधदि = वाधता है । कम्म = कर्म को । मुच्चदि =
छुटकारा पा जाता है । कम्मोहि = कर्मों से । रागरहिदप्पा = आसक्ति से
रहित व्यक्ति । एसो = यह । वधसमासो = वध का संधेप । जीवाण =
जीवो के । जाण = समझो । णिच्छयदो = निस्सदेह ।

72 जो (ज) 1/1 सवि इदियादिविजई [(इदिय) + (आदि) + (विजइ)]
[(इदिय) - (आदि) - (विजइ) 1/1 वि] भवीय (भव) सक उवओग-
मप्पण [(उवओग) + (अप्पण)] उवओग (उवओग) 2/1 अप्पण
(अप्प) 2/1 स्वाधिक 'ग' प्रत्यय भादि (भा) व 3/1 सक कम्मोहि
(कम्म) 3/2 सो (त) 1/1 सवि ण (अ) = नहीं रजदि (रजदि) व
कर्म 3/1 सक अनि किह (अ) = कैसे त (त) 2/1 सवि पाणा (पाण)
1/2 अणुचरति (अणुचर) व 3/2 सक ।

72 जो = जो । इदियादिविजई = इन्द्रियादि का विजेता । भवीय = होकर ।
उवओगमप्पण = उवओग + अप्पण = उपयोगमयी, आत्मा को । भादि =
ध्याता है । कम्मोहि = कर्मों के द्वारा । सो = वह । ण (अ) = नहीं ।
रजदि = रगा जाता है । किह = कैसे । त = उसको । पाणा = प्राण ।
अणुचरति = अणुसरण करते हैं → करेंगे ।

- 73 परिणमदि (परिणाम) व 3/1 अक णैयमट्ठ [(णैय) + (अट्ठ)] णैय¹ (णैय) विधि कृ 2/1 अनि अट्ठ¹ (अट्ठ) 2/1 एादा (णाउ) 1/1 वि जदि = यदि णेव (अ) = कभी नहीं खाइग (खाइग) 1/1 वि तस्स (त) 6/1 स एाणत्ति [(णाण) + (इति)] णाण (णाण) 1/1 इति (अ) = इसलिए तं (त) 2/1 सवि जिणिंदा (जिणिंद) 1/2 खवयत्त² (खवय) वकृ 2/1 अनि कम्ममेवुत्ता [(कम्म) + (एव) + (उत्ता)] कम्म (कम्म) 2/1 एव (अ) = ही उत्ता³ (उत्त) भूकृ 1/2 अनि ।

1 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है ।
(हे प्रा व्या 3-137)

प्रे वकृ

2 क्षप् → क्षपय् → क्षपयत् → क्षपयन्त (2/1) → खवयत् (2/1 अनि)

3 यहा 'उत्ता' का प्रयोग कर्तृवाच्य मे हुआ है ।

- 73 परिणमदि = रूपान्तरित होता है । णैयमट्ठ = णैय + अट्ठ = जानने योग्य पदार्थ = ज्ञेय । एादा = ज्ञाता । जदि = यदि । णेव = कभी नहीं । खाइग = कर्मों के क्षय से उत्पन्न । तस्स = उसका । णाण = ज्ञान । इति = इसलिए । त = उसको । जिणिंदा = जिनेन्द्रो ने । खवयत्त = क्षय करता हुआ । कम्ममेवुत्ता = कम्म + एव + उत्ता = कर्मों को, ही, कहा ।

- 74 ज (ज) 2/1 सवि भाव (भाव) 2/1 सुहमसुह [(सुह) + (असुह)] गुह (सुह) 2/1 वि अमुह (अमुह) 2/1 वि करेदि (कर) व 3/1 सक आदा (आद) 1/1 स (त) 1/1 सवि तस्स (त) 6/1 स खलु (अ) = निस्सदेह कत्ता (कत्तु) 1/1 वि त (त) 1/1 सवि तस्स (त) 6/1 स होदि (हो) व 3/1 अक कम्म (कम्म) 1/1 सो (त) 1/1 सवि तस्स (त) 6/1 स दु (अ) = ही वेदगो (वेदग) 1/1 वि अप्पा (अप्प) 1/1 ।

- 74 ज = जिस (को) । भाव = भाव को । सुहमसुह = शुभ-अशुभ । करेदि = करता है । आदा = आत्मा । स = वह । तस्स = उसका । खलु = निस्सदेह । कत्ता = कर्त्ता । त = वह । तस्स = उसका । कम्म = कर्म । सो = वह । तस्स = उसका । दु = ही । वेदगो = भोक्ता । अप्पा = आत्मा ।

- 75 ज (ज) 2/1 सवि कुणदि (कुण) व 3/1 सक भावमादा [(भाव) + (आदा)] भाव (भाव) 2/1 आदा (आद) 1/1 कत्ता (कत्तु) 1/1 वि सो (त) 1/1 सवि होदि (हो) व 3/1 अक तस्स (त) 6/1 स कम्मस्स (कम्म) 6/1 णाणिस्स (णाणि) 6/1 वि दु (अ) = पादपूर्ति

शाणमश्रो (णाणमश्र) 1/1 वि अण्णाणमश्रो (अण्णाणमश्र) 1/1 वि
अण्णाणिस्स (अणाणि) 6/1 वि ।

75 ज = जो । कुणदि = उत्पन्न करता है । भावमादा = भाव को, आत्मा ।
कर्त्ता = कर्ता । सो = वह । होदि = होता है । तस्स = उस (का) ।
कम्मस्स = कर्म का । णाणिस्स = ज्ञानी का । णाणमश्रो = ज्ञानमय ।
अण्णाणमश्रो = अज्ञानीमय । अणाणिस्स = अज्ञानी का ।

76-77 कण्यमया (कण्यमय) 5/1 वि भावादो (भाव) 5/1 जायते (जाय)
व 3/2 अक कुडलादयो [(कुडल) + (आदयो)] [(कुडल) - (आदि)
1/2] भावा (भाव) 1/2 अयमयया (अयमय) 5/1 वि स्वार्थिक 'य' प्रत्यय
जह (अ) = जैसे दु (अ) = और कडयादी [(कडय) + (आदी)]
[(कडय) + (आदि) 1/2]

अण्णाणमया (अण्णाणमय) 1/2 भावा (भाव) 1/2 अणाणिणो
(अणाणि) 6/1 बहुविहा (बहुविह) 1/2 वि (अ) = ही जायते (जाय)
व 3/2 अक णाणिस्स (णाणि) 6/1 दु (अ) = तथा णाणमया
(णाणमय) 1/2 सव्वे (सव्व) 1/2 सवि तहा (अ) = वैसे ही होति
(हो) व 3/2 अक ।

76-77 कण्यमया = कनकमय । भावादो = वस्तु से । जायते = उत्पन्न होती है ।
कुंडलादयो = कुण्डल आदि । भावा = वस्तुएँ । अयमयया = लोहमय ।
भावादो = वस्तु से । जह = जैसे । जायते = उत्पन्न होती है । दु = और ।
कडयादी = कडे आदि ।

अण्णाणमय = अज्ञानमय । भावा = भाव । अणाणिणो = अज्ञानी
के । बहुविहा = अनेक प्रकार के । वि = ही । जायते = उत्पन्न होते हैं ।
णाणिस्स = ज्ञानी के । दु = तथा । णाणमया = ज्ञानमय । सव्वे = सभी ।
भावा = भाव । तहा = वैसे ही । होति = होते हैं ।

78 रिच्छयणस्स (णिच्छयणय) 6/1 एव (अ) = इस प्रकार आदा (आद)
1/1 अप्पाणमेव [(अप्पाण) + (एव)] अप्पाण (अप्पाण) 2/1 एव
(अ) = ही हि (अ) = पादपूरक करेदि (कर) व 3/1 सक वेदयदि
(वेदयदि) व 3/1 सक अनि पुणो (अ) = तथा त (त) 2/1 सवि चेव
(अ) ही जाण (जाण) विधि 2/1 सक अत्ता (अत्त) 1/1 दु (अ) = ही
अत्ताण (अत्ताण) 2/1 ।

78 रिगच्छयणयस्स = निश्चयनय के । एवं = इस प्रकार । आदा = आत्मा । अप्पाणमेव = आत्मा को ही । करेदि = करता है । वेदयदि = भोगता है । पुणो = तथा । त = उसको । चेव = ही । जाण = जानो । अत्ता = आत्मा । दु = ही । अत्ताण = आत्मा को ।

79 ववहारस्स (ववहार) 6/1 दु (अ) = किन्तु आदा (आद) 1/1 पोगल-कम्म [(पोगल)-(कम्म) 2/1] करेदि (कर) व 3/1 सक णेयविह (णेयविह) 2/1 वि त (त) 2/1 सवि चेव (अ) = ही य (अ) = तथा वेदयदे (वेदयदे) व 3/1 मक अणेयविह (अणेयविह) 2/1 वि ।

79 ववहारस्स = व्यवहारनय के । दु = किन्तु । आदा = आत्मा । पोगलकम्म = पुद्गल कर्म को । करेदि = करता है । णेयविह = अनेक प्रकार के । त = उस (को) । चेव = ही । य = तथा । वेदयदे = भोगता है । पोगलकम्म = पुद्गलकर्म को । अणेयविह = अनेक प्रकार के ।

80 अप्पा (अप्प) 1/1 उवओगप्पा [(उवओग) + (अप्पा)] [(उवओग)-(अप्प) 1/1] उवओगो (उवओग) 1/1 णाणदसण [(णाण)-(दसण) 1/1] भणिदो (मण) भूकु 1/1 सो (त) 1/1 सवि हि (अ) = पादपूरक सुहो (सुह) 1/1 वि असुहो (असुह) 1/1 वि वा (अ) = अथवा अप्पणो (अप्प) 6/1 हवदि (हव) व 3/1 अक ।

80 अप्पा = आत्मा । उवओगप्पा = उपयोग स्वभाववाला । उवओगो = उपयोग । णाणदसण = ज्ञान-दर्शन । भणिदो = कहा गया । सो = वह । सुहो = शुभ । असुहो = अशुभ । वा = अथवा । उवओगो = उपयोग । अप्पणो = आत्मा का । हवदि = होता है ।

81 जवि (अ) = यदि सो (त) 1/1 सवि सुहो (सुह) 1/1 व (अ) = अथवा असुहो (असुह) 1/1 ए (अ) = नहीं हवदि¹ (हव) व 3/1 अक आदा (आद) 1/1 सय = स्वय सहवेण [(स)वि-(हाव) 3/1] ससारोवि [(ससारो) + (अवि)] ससारो (ससार) 1/1 अपि = ही ए = नहीं विज्जदि¹ (विज्ज) व 3/1 अक सब्बेसि (सब्ब) 6/2 सवि जीवकायाण (जीवकाय) 6/2 ।

1 हेतुभूचक वाक्यो मे विधिलिग के स्थान पर प्राय वर्तमान काल का प्रयोग होता है ।

81 जदि = यदि । सौ = वह । सुहो = शुभ रूप । वं = अथवा । असुहो = अशुभ रूप । ण = नही । हवदि = होता है → होवे । आदा = आत्मा । सय = स्वय । सहावेण = अपने भाव से । ससारोवि = ससार ही । ण = न । विज्जदि = होता है → होवे । सब्बेसिं = किसी भी । जीवकायाण = जीव के ।

82 देवदजदिगुरुपूजासु [(देवद)¹-(जदि)-(गुरु)-(पूजा) 7/2] चेव (अ) = तथा दाणम्मि (दाण) 7/1 वा (अ) = तथा सुसीलेसु (सुसील) 7/2 उववासादिसु [(उववास) + (आदिसु)] [(उववास)-(आदि) 7/2 अनि] रत्तो (रत्त) भूक्क 1/1 अनि सुहोवओगप्पगो [(सुह) + (उवओग) + (अप्पगो)] [(सुह)-(उवओग)-(अप्पग) 1/1 वि] अप्पा (अप्प) 1/1 ।

1 'देवदा' के स्थान पर 'देवद' हुआ है, समास में दीर्घ का ह्रस्व हो सकता है । (हे प्रा व्या 1-67)

82 देवदजदिगुरुपूजासु = देव, साधु, गुरु की भक्ति में । चेव = तथा । दाणम्मि = दान में । वा = तथा । सुसीलेसु = शीलो में । उववासादिसु = उपवास आदि में । रत्तो = सलग्न । 'सुहोवओगप्पगो = शुभोपयोगवाला । अप्पा = आत्मा ।

83 सुहपरिणामो [(सुह) वि-(परिणाम) 1/1] पुण्ण (पुण्ण) 1/1 असुहो (असुह) 1/1 वि पावति [(पाव) + (इति)] पाव (पाव) 1/1 इति = शब्दस्वरूपद्योतक हवदि (हव) व 3/1 अक जीवस्स (जीव) 6/1 दोण्ह¹ (दो) 6/2 वि पोगलमेत्तो¹ [(पोगल)-(मेत्त) 1/1] भावो (भाव) 1/1 कम्मत्तण (कम्मतण) 2/1 पत्तो (पत्त) भूक्क 1/1 अनि ।

1 पण्ठी का प्रयोग तृतीया के स्थान पर हुआ है (हे प्रा व्या 3-134) ।

83 सुपरिणामो = शुभ परिणाम । पुण्ण = पुण्य । असुहो = अशुभ । पाव = पाप । हवदि = होता है । जीवस्स = जीव का । दोण्ह = दोनों कारणों से । पोगलमेत्तो = पुद्गल की राशि । भावो = भाव ने । कम्मत्तण = कर्मत्व को । पत्तो = प्राप्त किया ।

84 रागो (राग) 1/1 जस्स (ज) 6/1 स पसत्थो (पसत्थ) 1/1 वि अणुकपाससिदो [(अणुकपा)-(ससिद) भूक्क 1/1 अनि] य (अ) = तथा परिणामो (परिणाम) 1/1 चित्तम्हि (चित्त) 7/1 णत्थि (अ) = नहीं है

कलुस (कलुस) 1/1 पुण्ण (पुण्ण) 2/1 जीवस्स (जीव) 6/1 आसवदि (आसव) व 3/1 सक ।

84 रागो = राग । जस्स = जिसके । पसत्थ = शुभ । अणुकपाससिदो = अनुकपा पर आश्रित । य = तथा । चित्तम्हि = चित्त मे । एत्थि = नहीं । कलुस = मलिनता । पुण्ण = पुण्य । जीवस्स = जीव के । आसवदि = आगमन होता है ।

85 अरहतसिद्धसाहुसु [(अरहत)-(सिद्ध)-(साहु) 7/2 अनि] भत्ती (भत्ति) 1/1 धम्मम्मि (धम्म) 7/1 जा (जा) 1/1 सवि य (अ) = तथा खलु (अ) = वाक्यालकार चेद्ठा (चेद्ठा) 1/1 अणुगमण (अणुगमण) 1/1 पि (अ) = पादपूर्ति गुरुण (गुरु) 6/2 पसत्थरागो [(पसत्थ) भूक अनि-(राग) 1/1] ति (अ) = समाप्तिसूचक वुच्चति (वुच्चति) व कर्म 3/2 सक अनि ।

85 अरहतसिद्धसाहुसु = अरहतो, सिद्धो और साधुओ मे । भत्ती = भक्ति । धम्मम्मि = धर्म मे । जा = जो । य = तथा । चेद्ठा = प्रवृत्ति । अणुगमण = अनुसरण । गुरुण = पूज्य व्यक्तियों का । पसत्थरागो = शुभ राग । वुच्चति = कहा जाता है ।

86 तिसिद (तिसिद) भूक 2/1 अनि बुभुक्खिद (बुभुक्खिद) 2/1 वि वा (अ) = अथवा दुहिद (दुहिद) 2/1 वि दट्ठण (दट्ठण) सक जो (ज) 1/1 सवि दु (अ) = भी दुहिदमणो {[(दुहिद) वि - (मण) 1/1] वि} पडिबज्जदि (पडिबज्ज) व 3/1 सक त (त¹) 2/1 स किवया (किवया) 3/1 अनि (क्रिविअ की तरह प्रयुक्त) = दयालुता से तस्सेसा [(तस्स) + (एसा)] तस्स (त) 6/1 स एसा (एता) 1/1 सवि होदि (हो) व 3/1 अक अणुकपा (अणुकपा) 1/1 ।

1 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है ।
(हे प्रा व्या 3-137)

86 तिसिद = प्यासे । बुभुक्खिद = भूखे । वा (अ) = अथवा । दुहिद = दुखी । दट्ठण = देख कर । जो = जो । दु (अ) = भी । दुहिदमणो = दुखी मनवाला । पडिबज्जदि = व्यवहार करता है । त = उसके प्रति । किवया = दयालुता से । तस्सेसा = उसके, यह । होदि = होती है । अणुकपा = अनुकपा ।

87 कोधो (कोध) 1/1 व (अ) = या जदा (अ) = जिस समय माणो (माण) 1/1 माया (माया) 1/1 लोभो (लोभ) 1/1 व (अ) = या चित्तमासेज्ज [(चित्त) + (आसेज्ज)] चित्त¹ (चित्त) 2/1 आसेज्ज (आस) व 3/1 अक जीवस्स (जीव) 6/1 कुणदि (कुण) व 3/1 सक खोह (खोह) 2/1 कलुसो (कलुस) 1/1 त्ति (अ) = शब्द स्वरूपद्योतक य (अ) = निस्सन्देह त (अ) = उस समय बुधा (बुध) 1/2 वि वेत्ति (वू) व 3/2 सक ।

1 सप्तमी के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग किया गया है । (हे प्रा व्या 3-137) ।

87 कोधो = कोध । व = या । जदा = जिस समय । माणो = मान । माया = माया । लोभो = लोभ । व = या । चित्तमासेज्ज = चित्त मे, घटित होता है । जीवस्स = जीव के । कुणदि = उत्पन्न करता है । खोह = व्याकुलता (को) । कलुसो = मलिनता । य = निस्सन्देह । त = उस समय । बुधा = ज्ञानी । वेत्ति = कहते हैं ।

88 चरिया (चरिया) 1/1 पमादबहुला [(पमाद) - (बहुल → बहुला) 1/1] कालुस्स (कालुस्स) 1/1 लोलदा (लोल → लोलदा) 1/1 य (अ) = और विसयेसु (विमय) 7/2 परपरितावपवादो [(पर) + (परिताव) + (अपवाद)] [(पर)वि - (परिताव) - (अपवाद) 1/1] पावस्स (पाव) 6/1 य(अ) = व आसव (आसव) 2/1 कुणदि (कुण) व 3/2 सक ।

88 चरिया = आचरण । पमादबहुला = लापरवाहीपूर्वक । कालुस्सं = मलिनता । लोलदा = लालसा । य = और । विसयेसु = विषयो मे । परपरितावपवादो = परपरिताव + अपवादो = दूसरो को पीडा देना, कलक लगाना । पावस्स = पाप के । य = व । आसव = आने को । कुणदि = प्रोत्साहित करता है ।

89 सण्णाओ (सण्णा) 1/2 य (अ) = और तिलेस्सा [(ति) - (लेस्सा) 1/1] इंदियवसदा = [(इदिय) - (वस → वसदा) 1/1] य (अ) = और अत्तरुद्दाणि [(अत्त) - (रुद्) 1/2] णाण (णाण) 1/1 च (अ) = और दुप्पउत्त (दुप्पउत्त) भूक्क 1/1 अणि मोहो (मोह) 1/1 पावप्पदा [(पाव) - (प्पद) 1/2] होति (हो) व 3/2 अक ।

89 सण्णाओ = सज्ञाए । य = और । तिलेस्सा = तीन लेश्याए । इंदियवसदा = इन्द्रियो की अधीनता । अत्तरुद्दाणि = अर्त्त और रीद्र ध्यान । णाणं =

ज्ञान । दुष्पुत्र = अनुचित रूप से प्रयोग किया गया । मोहो = मोह ।
पावप्पदा = पाप के स्थान । होति = होते हैं ।

90 भाव (भाव) 1/1 तिविहपयार [(तिविह) वि - (पयार) 1/1]
सुहासुह [(सुह) + (असुह)] [(सुह) वि - (असुह) वि] सुद्धमेव
[(सुद्ध) + (एव)] सुद्ध (सुद्ध) 1/1 वि एव (अ) = ही णायव्व (णा)
विधि कृ 1/1 असुह (असुह) 1/1 वि च (अ) = और अट्टरुद्ध [(अट्ट) -
(रुद्ध) 1/1] सुहधम्म [(सुह) वि - (धम्म) 1/1] जिणवरिदेहि
(जिणवरिद) 3/2 ।

90 भाव = भाव । तिविहपयार = तीन प्रकार के भेद । सुहासुह = शुभ, अशुभ ।
सुद्धमेव = शुद्ध ही । णायव्व = समझा जाना चाहिए । असुह = अशुभ ।
च = और । अट्टरुद्ध = आर्त और रौद्र । सुहधम्म = शुभ, धर्म ।
जिणवरिदेहि = अरहतों द्वारा ।

91 जो (ज) 1/1 सवि जाणादि¹ (जाण) व 3/1 सक जिणिदे (जिणिद)
2/2 पेच्छदि (पेच्छ) व 3/1 सक सिद्धे (सिद्ध) 2/2 तथेव (अ) =
उसी प्रकार अणगारे (अणगार) 2/2 जीवे (जीव) 7/1 य (अ) =
तथा साणुकपो [(स) + (अणुकपो)] [(स) - (अणुकपो) 1/1]
उवओगो (उवओग) 1/1 सो (त) 1/1 सवि सुहो (सुह) 1/1 तस्स
(त) 6/1 स ।

1 (हेम प्राकृत व्याकरण, 3-158)

91 जो = जो । जाणादि = समझता है । जिणिदे = अरहतों को । पेच्छदि =
समझता है । तथेव = उसी प्रकार । अणगारे = साधुओं को । जीवे = जीव
पर । य = तथा । साणुकपो = दयासहित । उवओगो = उपयोग । सो =
वह । सुहो = शुभ । तस्स = उसका ।

92 विसयकसाओगाढो [(विसय) + (कसाअ) + (ओगाढो)] [(विसय) -
(कसाअ) - (ओगाढ) भूकृ 1/1 अनि] दुस्सुदिदुच्चित्तदुद्धगोदिठजुदो
[(दुस्सुदि) - (दुच्चित्त) - (दुद्ध) वि - (गोदिठ) - (जुद) भूकृ 1/1
अनि] उगो (उग) 1/1 वि उम्मगपरो¹ [(उम्मग) - (पर) 1/1 वि]
उवओगो (उवओग) 1/1 जस्स (ज) 6/1 स सो (त) 1/1 सवि
असुहो (असुह) 1/1 वि ।

1 समास के अन्त में अर्थ होता है 'लीन' ।

92 विसयकसाश्रोगाढो = विषय-कपायो मे दूवा हुआ । दुम्मुद्दिदुच्चित्तदुद्ध-
गोद्विजुदो = दुष्ट मिद्वान्त, दुष्ट बुद्धि, दुष्ट चर्या मे जुडा हुआ । उगो =
क्रूर । उम्मगपरो = कुपय मे लीन । उवओगो = उपयोग । जस्स = जिम
का । सो = वह । असुहो = अशुभ ।

93 सुद्ध (सुद्ध) 1/1 वि सुद्धसहाव [(सुद्ध) वि- (सहाव) 1/1] अप्पा¹
(अप्प) 2/1 अपभ्रण अप्पम्मि² (अप्प) 7/1 त (त) 1/1 मवि च
(अ) = ही णायव्व (णा) विधि कृ 1/1 इदि (अ) = इम प्रकार
जिणवरेहि (जिणवर) 3/2 भणिय (भण) भूकृ 1/1 ज (ज) 1/1 मवि
सेयं (सेय) 1/1 वि तं (त) 2/1 मवि समायरह (नमायर) विधि 2/2
सक ।

1 कभी कभी मज्झिमे विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग पाया
जाता है (हे प्रा व्या, 3-137) ।

2 कभी कभी तृतीया विभक्ति के स्थान पर सप्तमी विभक्ति का प्रयोग पाया
जाता है (हे प्रा व्या, 3-135) ।

93 सुद्ध = शुद्ध । सुद्धसहाव = शुद्ध स्वभाव । अप्पा = आत्मा को → आत्मा मे ।
अप्पम्मि = आत्मा मे → आत्मा के द्वारा । तं = वह । च = ही । णायव्वं =
अनुभव किया जाना चाहिए । इदि = इम प्रकार । जिणवरेहि = अरहन्तो
द्वारा । भणियं = कहा गया । जं = जो । सेय = श्रेष्ठ । त = उसको ।
समायरह = आचरण करो ।

94 उवओगो (उवओग) 1/1 जदि (अ) = यदि हि = पादपूरक सुहो = शुभ
पुणं (पुण) 2/1 वि जीवस्स (जीव) 6/1 संचय (सचय) 2/1 जादि
(जा) व 3/1 नक असुहो (असुह) 1/1 वि वा (अ) = और तथ
(अ) = उसी प्रकार पाव (पाव) 2/1 तेसिमभावे [(तेमि) + (अभावे)]
तेसि (त) 6/2 म अभावे (अभाव) 7/1 ए (अ) = नहीं चयमत्थि
[(चय) + (अत्थि)] चय¹ (चय) 2/1 अत्थि (अ) = है ।

1 यहा द्वितीया का प्रयोग प्रथमा अर्थ मे किया गया है ।

(हे प्रा व्या 3-137) ।

94 उवओगो = उपयोग । जदि = यदि । सुहो = शुभ । पुणं = पुण्य को ।
जीवस्स = जीव का । सचयं = सग्रह (को) । जादि = करता है । असुहो =
अशुभ । वा = और । तथ = उसी प्रकार । पाव = पाप को । तेसिमभावे =
उनके, अभाव मे । ण = नहीं । चयमत्थि = सग्रह नहीं होता है ।

95 अह (अ) = यदि पुण (अ) = किन्तु अप्पा (अप्प) 2/1 अपभ्रश
णिच्छदि [(ण) + (इच्छदि)] ण (अ) = नहीं इच्छदि (इच्छ) व 3/1
सक पुण्णाइ (पुण्ण) 2/2 करेदि (कर) व 3/1 सक णिरवसेसइ
(णिरवसेस) 2/2 वि तह वि (अ) = तो भी ण (अ) = नहीं पावदि
(पाव) व 3/1 सक सिद्धि (सिद्धि) 2/1 ससारत्थो (ससारत्थ) 1/1 वि
पुणो (अ) = ही भण्णदो (भण) भूक 1/1 ।

95 अह = यदि । पुण = किन्तु । अप्पा = आत्मा को । णिच्छदि = ण +
इच्छदि = नहीं, चाहता है । पुण्णाइ = पुण्यो को । करेदि = करता है ।
णिरवसेसाइ = मकल (को) । तह वि = तो भी । ण = नहीं । पावदि =
पाता है । सिद्धि = परम शान्ति । ससारत्थो = ससार में स्थित । पुणो =
ही । भण्णदो = कहा गया ।

96 वदणियमाणि [(वद) - (णियम) 2/2] धरता (धर) वक्क 1/2 सीलाणि
(सील) 2/2 तहा (अ) = तथा तव (तव) 2/1 च (अ) = और
कुव्वता (कुव्व) वक्क 1/2 परमट्ठवाहिरा [(परमट्ठ) - (वाहिर) 1/2
वि] जे (ज) 1/2 मवि णिव्वाण (णिव्वाण) 2/1 ते (त) 1/2 सवि ण
(अ) = नहीं विदति (विद) व 3/2 सक ।

96 वदणियमाणि = व्रत और नियमों को । धरता = धारण करते हुए ।
सीलाणि = शीलों को । तहा = तथा । तव = तप को । च = और ।
कुव्वता = पालन करते हुए । परमट्ठवाहिरा = परमार्थ से अपरिचित ।
जे = जो । णिव्वाण = परम शान्ति को । ते = वे । ण = नहीं । विदति =
प्राप्त करते हैं ।

97 सुहपरिणामो [(मुह) वि - (परिणाम) 1/1] पुण्ण (पुण्ण) 1/1
असुहो (असुह) 1/1 वि पावत्ति [(पाव) + (इति)] पाव (पाव)
मूलशब्द इति = इस प्रकार भणियमण्णेसु [(भणिय) + (अण्णेसु)]
भणिय (भण) भूक 1/1 अण्णेसु (अण्ण) 7/2 परिणामो (परिणाम) 1/1
णण्णगदो [(ण) + (अण्ण) + (गदो)] ण = नहीं [(अण्ण) वि -
(गद) भूक 1/1 अनि] दुक्खक्खयकारणं [(दुक्ख) - (क्खय) - (कारण)
1/1] समये (समय) 7/1 ।

97 सुहपरिणामो = शुभ, भाव । पुण्ण = पुण्य । असुहो = अशुभ । पावत्ति =
पाप, इस प्रकार । भणियमण्णेसु = कहा गया, पर के प्रति । परिणामो =

भाव । एण्णगदो = पर मे न भुका हुआ । दुखलक्षयकारण = दुख के नाश का कारण । समये = आगम मे ।

98 आदसहावा [(आद) - (सहाव) 5/1] अण्णं (अण्ण) 1/1 सवि सच्चित्ताचित्तमित्सिय [(सच्चित्त) + (अचित्त) - (मित्सिय) 1/1 वि] हवइ (हव) व 3/1 अक त (त) 1/1 सवि परदब्बं [(पर) वि - (दब्ब) 1/1] भणिय (भण) भूक 1/1 अचित्तत्थ (क्रिविअ) = सच्चाई-पूर्वक सव्वदरसीहि (सव्वदरसि) 3/2 वि ।

98 आदसहावा = आत्म-स्वभाव से । अण्ण = अन्य । सच्चित्ताचित्तमित्सियं = सचित्त - अचित्त - मिश्रित । हवइ = होता है । त = वह । परदब्बं = पर द्रव्य । भणिय = कहा गया । अचित्तत्थं = सच्चाई-पूर्वक । सव्वदरसीहि = सर्वज्ञो द्वारा ।

99 जस्स (ज) 6/1 स हिदयेणुमत्त¹ [(हिदये) + (अणुमत्त)] हिदये (हिदय) 7/1 अणुमत्त¹ (अणुमत्त) 1/1 परदब्बम्हि (परदब्ब) 7/1 विज्जवे (विज्ज) व 3/1 अक रागो (राग) 1/1 सो (त) 1/1 सवि ए (अ) = नही विजाणदि (विजाण) व 3/1 सक समय (समय) 2/1 सगस्स (सग) 6/1 सव्वागमघरोवि [(सव्व) + (आगम) + (घरो) + (वि)] [(सव्व) वि - (आगम) - (घर) 1/1 वि] वि (अ) = भी ।

1 अणुमत्त = णुमत्त । यहा स्वर का लोप है (अभिनव प्राकृत व्याकरण, पृष्ठ 123) ।

99 जस्स = जिसके । हिदयेणुमत्त = हृदय मे अणु के बराबर । परदब्बम्हि = पर द्रव्य मे । विज्जवे = विद्यमान है । रागो = राग । सो = वह । अ = नही । विजाणदि = समझता है । समयं = आचरण को । सगस्स = आत्मा के । सव्वागमघरोवि = समस्त आगमो का धारण करनेवाला ।

100 जो (ज) 1/1 सवि सव्वसगमुक्को [(सव्व) वि - (सग) - (मुक्क) भूक 1/1 अनि] णण्णमणो = अण्णमणो¹ (अण्णमण) 1/1 वि अप्पण (अप्पण) 2/1 सहावेण (सहाव) 3/1 जाणदि (जाण) व 3/1 सक पस्सदि (पस्स) व 3/1 सक णियव (क्रिविअ) = निश्चयात्मक रूप से सो (त) 1/1 सवि सगचरिय [(सग) - (चरिय) 2/1] चरदि (चर) व 3/1 सक जीवो (जीव) 1/1 ।

1 यहा स्वर का लोप है (अभिनव प्राकृत व्याकरण, पृष्ठ, 123) ।

100 जो = जो । सव्वसगमुक्को = सम्पूर्ण आसक्ति से रहित । (अ)ण्णमणो = तल्लीन । अप्पण = आत्मा को । सहावेण = स्वभाव से । जाणदि = जानता (है) । पस्सदि = देखता है । णियव = निश्चयात्मक रूप से । सो = वह । सगचरिय = आत्मा में, आचरण (को) । चरदि = करता है । जीवो = व्यक्ति ।

101 एव (अ) = इस प्रकार विदिदत्थो [(विदिद) + (अत्थो)] [(विदिद) भूकृ अनि - (अत्थ) 1/1] जो (ज) 1/1 सवि दब्बेसु (दब्ब) 7/2 ए (अ) = नहीं रागमेदि [(राग) + (एदि)] राग (राग) 2/1 एदि (ए) व 3/1 सक दोस (दोस) 2/1 वा (अ) = और उवओगविसुद्धो [(उवओग) - (विसुद्ध) 1/1 वि] सो (त) 1/1 सवि खवेदि (खव) व 3/1 सक वेहुम्भव [(देह) + (उम्भव)] [(देह) - (उम्भव) 2/1 वि] दुक्खं (दुक्ख) 2/1 ।

101 एव = इस प्रकार । विदिदत्थो = विदिद + अत्थ = जानी गई, वस्तुस्थिति । जो = जो । दब्बेसु = वस्तुओं के प्रति । ए = नहीं । रागमेदि = राग + एदि = राग को, करता है । दोस = द्वेष को । वा = और । उवओगविसुद्धो = उपयोग से शुद्ध । सो = वह । खवेदि = समाप्त कर देता है । वेहुम्भव = देह से उत्पन्न । दुक्ख = दुःख को ।

102 अइसयमादसमुत्थं [(अइसय) + (आद) + (समुत्थ)] अइसय (अइसय) 1/1 वि [(आद) - (समुत्थ) 1/1 वि] विसयातीद [(विसय) + (अतीद)] [(विसय) - (अतीद) 1/1 वि] अणोवममणत [(अणोवम) + (अणत)] अणोवम (अणोवम) 1/1 वि अणत (अणत) 1/1 वि अब्बुच्छिण्ण (अब्बुच्छिण्ण) 1/1 वि च (अ) = तथा सुह (सुह) 1/1 सुद्धुवओगप्पसिद्धाण [(सुद्ध) + (उवओग) + (प्पसिद्धाण)] [(सुद्ध)भूकृ अनि - (उवओग) - (प्पसिद्ध) भूकृ 6/2 अनि] ।

102 अइसयमादसमुत्थ = अइसय + आद + समुत्थ = श्रेष्ठ, आत्मोत्पन्न, (आत्मा से, उत्पन्न) । विसयातीद = विषयातीत । अणोवममणत = अणोवम + अणत = अनुपम, अनन्त । अब्बुच्छिण्णं = अविच्छिन्न । च = तथा । सुह = सुख । सुद्धुवओगप्पसिद्धाण = सुद्ध + उवओग + प्पसिद्धाण = शुद्ध, उपयोग से, विभूषित का ।

- 103 धम्मण¹ (धम्म) 3/1 परिणदप्पा [(परिणद) + (अप्पा)] [(परिणद) भूकृ अनि - (अप्प) 1/1] अप्पा (अप्प) 1/1 यदि (अ) = यदि सुद्धसपयोगजुदो [(सुद्ध) वि - (सपयोग) - (जुद) भूकृ 1/1 अनि] पावदि (पाव) व 3/1 सक णिव्वाणसुहं [(णिव्वाण) - (सुह) 2/1] सुहोवजुत्तो [(सुह) + (उवजुत्तो)] [(सुह) - (उवजुत्त)भूकृ 1/1अनि] व (अ) = तथा सग्गसुह [(सग्ग) - (सुह) 2/1] ।

1 कभी कभी सप्तमी के स्थान पर तृतीया का प्रयोग पाया जाता है ।
(हे प्रा व्या 3-137) ।

- 103 धम्मण = धर्म के रूप में । परिणदप्पा = परिणत + अप्पा = रूपान्तरित, व्यक्ति । अप्पा = व्यक्ति । यदि = यदि । सुद्धसपयोगजुदो = शुद्ध, क्रियाओं से, युक्त । पावदि = प्राप्त करता है । णिव्वाणसुह = परम शान्तिरूपी सुख को । सुहोवजुत्तो = सुह + उवजुत्तो = शुभ क्रियाओं से, युक्त । व = तथा । सग्गसुह = स्वर्ग, सुख को ।

- 104 चारित्त (चारित्त) 1/1 खलु (अ) = निस्सदेह धम्मो (धम्म) 1/1 धम्मो (धम्म) 1/1 जो (ज) 1/1 सवि सो (त) 1/1 सवि समोत्ति [(समो) + (इति)] समो (सम) 1/1 इति (अ) = निश्चय ही णिहिट्ठो (णिहिट्ठ) भूकृ 1/1 अनि मोहक्खोहविहीणो [(मोह) - (क्खोह) - (विहीण) 1/1 वि] परिणामो (परिणाम) 1/1 अप्पणो (अप्पण) 6/1 हु (अ) = ही समो (सम) 1/1 ।

- 104 चारित्त = चारित्र । खलु = निस्सदेह । धम्मो = धर्म । धम्मो = धर्म । जो = जो । सो = वह । समोत्ति = समो + इति = समता, निश्चय ही । णिहिट्ठो = कहा गया । मोहक्खोहविहीणो = मोह, क्षोभ से रहित । परिणामो = भाव । अप्पणो = आत्मा का । हु = ही । समो = समता ।

- 105 तह (अ) = तथा सो (त) 1/1 सवि लद्धसहावो [(लद्ध) भूकृ अनि - (सहाव) 1/1] सव्वण्ह (सव्वण्ह) 1/1 वि सव्वलोगपदिमहिदो [(सव्व) - (लोगपदि) - (मह → महिद) भूकृ 1/1] भूदो (भूद) भूकृ 1/1 सयमेवादा [(सय) + (एव) + (आदा)] सय = स्वय एव (अ) = हो आदा (आद) 1/1 हवदि (हव) व 3/1 अक सयभुत्ति [(सयभू) + (इति)] सयभु (सयभू) 1/1 इति (अ) = इस प्रकार णिहिट्ठो (णिहिट्ठ) भूकृ 1/1 अनि ।

105 तहं = तथा । सो = वह । लब्धसहायो = स्वयं ही स्वभाव अनुभव कर लिया गया । सव्वण्हू = सर्वज्ञ । सव्वलोगपदिमहिदो = लोकाधिपति इन्द्र द्वारा पूजा गया । भूदो = हुआ । सयमेवादा = सय + एव + आदा = स्वयं, ही, व्यक्ति । हवदि = होता है । सयभुत्ति = स्वयंभू, इस प्रकार । णिहिदो = कहा गया ।

106 उवओगविसुद्धो [(उवओग) - (विसुद्ध) 1/1 वि] जो (ज) 1/1 सवि विगदावरणतरायमोहरओ [(विगद) + (आवरण) + (अतराय) + (मोह) + (रओ)] [(विगद) भूकृ अनि - (आवरण) - (अतराय) - (मोह) - (रओ) 1/1] भूदो (भूद) भूकृ 1/1 अनि सयमेवादा [(सय) + (एव) + (आदा)] सय (अ) = स्वयं एव (अ) = ही आदा (आद) 1/1 जादि (जा) व 3/1 सक पर (अ) = पूर्णरूप से ज्ञेयभूदानं [(ज्ञेय) - (भूद)]¹ 6/2] ।

1 कभी कभी द्वितीया के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-134) ।

106 उवओगविसुद्धो = उपयोग में, शुद्ध । जो = जो । विगदावरणतराय-मोहरओ = विगद + आवरण + अतराय + मोह + रओ = नष्ट कर दी गई, आवरण, बाधा, मोहरूपी धूल । भूदो = हुआ । सयमेवादा = सय + एव + आदा = स्वयं, ही, व्यक्ति । जादि = जान लेता है । पर = पूर्णरूप से । ज्ञेयभूदानं = ज्ञेय पदार्थों का → ज्ञेय पदार्थों को ।

107 सुविदिदपदत्थसुत्तो [(सु)अ = भली प्रकार से - (विदिद) भूकृ अनि - (पयत्थ) - (सुत्त) 1/1] सजमतवसजुदो [(सजम) - (तव) - (सजुद) 1/1 वि] विगदरागो [(विगद) - (राग) 1/1] समणो (समण) 1/1 समसुहदुक्खो [(सम) वि - (सुह) - (दुक्ख) 1/1] भणिदो (भण) भूकृ 1/1 सुद्धोवओगोत्ति [(सुद्ध) + (उवओगो) + (इति)] [(सुद्ध) वि - (उवओग) 1/1] इति (अ) = समाप्ति सूचक ।

107 सुविदिदपदत्थसुत्तो = भली प्रकार से जान लिए गए, तत्त्व, सूत्र । सजमतवसजुदो = समय और तप से संयुक्त । विगदरागो = राग समाप्त कर दिया गया । समणो = श्रमण । समसुहदुक्खो = सुख और दुःख समान । भणिदो = कहा गया । सुद्धोवओगोत्ति = शुद्धोपयोगवाला ।

108 ठाण्णिसेज्जविहारा [(ठाण) - (णिसेज्ज)]¹ - (विहार) 1/2] धम्मवसेतो [(धम्म) + (उवदेसो)] [(धम्म) - (उवदेम) 1/1] य (अ) = तथा णियदयो (णियद) पचमी-अर्थक ओ→यो प्रत्यय तेसि (त) 6/2 स अरहताण (अरहत) 6/2 काले (काल) 7/1 मायाचारोव्व [(माया) + (चारो) + (व्व)] [(माया) - (चार) 1/1] व्व (अ) = की तरह इत्थीणं² (इत्थि) 6/2 ।

1 यहा 'णिसेज्जा' का 'णिसेज्ज' हुआ है । समास में दीर्घ का ह्रस्व किया जा सकता है (हे प्रा व्या 1-67) ।

2 कमी कमी षष्ठी का प्रयोग सप्तमी के स्थान पर पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-134) ।

108 ठाण्णिसेज्जविहारा = खड़े रहना, बैठना, गमन करना । धम्मवसेतो = धर्म का उपदेश देना । य = तथा । णियदयो = निश्चित रूप से । तेसि = उन के । अरहताण = अरहतों के । काले = समय में । मायाचारोव्व = माताओं का आचरण, जैसे कि । इत्थीणं = स्त्रियों का → स्त्रियों में ।

109 सव्वेसि (सव्व) 6/2 सवि खघाण (खघ) 6/2 जो (ज) 1/1 सवि अतो (अत) 1/1 वि त (त) 2/1 सवि वियाण (वियाण) विधि 2/1 सक परमाणू (परमाणु) 1/1 सो (त) 1/1 सवि सस्सदो (सस्सद) 1/1 वि असदो (असद्) 1/1 वि एक्को (एक) 1/1 वि अविभाणि (अविभाणि) 1/1 वि मुत्तिभवो [(मुत्ति) - (भव) 1/1] ।

109 सव्वेसि = समस्त । खघाण = पुद्गल पिण्डों का । जो = जो । अतो = अन्तिम अंश । त = उसको । वियाण = समझो । परमाणू = परमाणु । सो = वह । सस्सदो = शाश्वत । असदो = शब्दरहित । एक्को = एक । अविभाणि = अविभाज्य । मुत्तिभवो = भौतिक वस्तुओं का मूल ।

110. आदेशमत्तमुत्तो [(आदेश)-(मत्त)-(मुत्त) 1/1 वि] धादुबुद्धकस्स [(धादु)-(बुद्धक) 6/1] कारण (कारण) 1/1 जो (ज) 1/1 सवि दु (अ) = पादपूरक सो (त) 1/1 सवि णेओ (णैअ) विधिकु 1/1 अनि परमाणू (परमाणु) 1/1 परिणामगुणो [(परिणाम)-(गुण) 1/1] सयमसदो [(सय) + (असदो)] सय (अ) = स्वयं असदो (असद्) 1/1 वि ।

110 आदेशमत्तमुत्तो = विवरण से, ही, मूर्त । धादुचदुक्कस्स = मूल तत्त्व, चार का । कारण = कारण । जो = जो । सो = वह । नेओ = समझा जाना चाहिए । परमाणू = परमाणु । परिणामगुणो = परिणमन, गुणवाला । समयसद्दो = सय + असद्दो = स्वय, शब्दरहित ।

111 सद्दो (सद्) 1/1 खंघप्पभवो [(खघ)-(प्पभव) 1/1 वि] खंधो (खघ) 1/1 परमाणुसगसघादो [(परमाणु)-(सग)-(सघ) 5/1] पुट्ठेसु¹ (पुट्ठ) भूक् 7/2 तेसु (त) 7/2 स जायवि (जा) व 3/1 अक सद्दो (सद्) 1/1 उप्पादगो (उप्पादग) 1/1 वि णियदो (णियद) भूक् 1/1 अणि ।

1 कभी-कभी तृतीया के स्थान पर सप्तमी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-137) ।

111 सद्दो = शब्द । खघप्पभवो = स्कन्धो से उत्पन्न । खघो = स्कन्ध । परमाणुसगसघादो = परमाणुओ के सगम - समूह से । पुट्ठेसु = स्पर्श मे → स्पर्श से । तेसु = उनमे । जायवि = उत्पन्न होता है । सद्दो = शब्द । उप्पादगो = उत्पन्न करनेवाला । णियदो = अवश्य ।

112 एयरसवण्णगघ [(एय)-(रस)-(वण्ण)-(गघ) 1/1] दो (दो) 1/1 वि फासं (फास) 1/1 सद्दकारणमसद्द [(सद्)+(कारण)+ (असद्)] [(सद्)-(कारण) 1/1] असद् (असद्) 1/1 वि खघतरिदं [(खघ)+(अतर)+(इद)] [(खघ)-(अतर)-(इम) 1/1 सवि] दब्ब (दब्ब) 1/1 परमाणु (परमाणु) 1/1 त (त) 2/1 सवि वियाणेहि (वियाण) विधि 2/1 सक ।

112 एयरसवण्णगघ = एकरस, वर्ण, गघ । दो = दो । फास = स्पर्श । सद्दकारणमसद्द = सद् + कारण + असद् = शब्द का कारण, शब्दरहित । खघतरिद = खघ + अतर + इद = स्कन्ध से सबध, यह । दब्ब = द्रव्य । परमाणु = परमाणु । त = उसको । वियाणेहि = समझो ।

113 उवभोज्जमिदिर्हि [(उवभोज्ज) + (इदिर्हि)] उवभोज्ज (उवभोज्ज) 1/1 वि इदिर्हि (इदिअ) 3/2 य (अ) = तथा इदिय (इदिय) मूल शब्द 1/2 काया (काया) 1/1 मणो (मण) 1/1 य (अ) = व कम्मणि (कम्म) 1/2 ज (ज) 1/1 सवि हवदि (हव) व 3/1 अक मुत्तमण्ण [(मुत्त)+(अण्ण)] मुत्त (मुत्त) 1/1 वि अण्ण (अण्ण) 1/1 वि त

(त) 1/1 सवि सव्वं (सव्व) 1/1 वि पुग्गलं (पुग्गल) 1/1 जाणै
(जाण) विधि 2/1 सक ।

113 उवभोज्जमिदिएहि = इन्द्रियो द्वारा भोगे जाने योग्य विषय । य = तथा ।
इदिय = इन्द्रिया । काया = शरीर । मणो = मन । य = व । कम्मणि =
कर्म । ज = जो । हवदि = है । मुत्तमण = अन्य भौतिक । त = वह ।
सव्व = सभी । पुग्गल = पुद्गल । जाणे = समझो ।

114 देहो (देह) 1/1 य (अ) = और मणो (मण) 1/1 वाणी (वाणी) 1/1
पोगलदव्वप्पगत्ति [(पोगल) + (दव्व) + (अप्पग)¹ + (इति)]
[(पोगल)-(दव्व)-(अप्पग) मूल शब्द 1/2] इति (अ) = पादपूरक
णिहिट्ठा (णिहिट्ठ) भूक 1/2 अति पोगलदव्वपि [(पोगल) + (दव्व)
+ (अपि)] [(पोगल)-(दव्व) 1/1] अपि = भी पुणो = और पिडो
(पिड) 1/1 परमाणुदव्वाण [(परमाणु)-(दव्व) 6/2] ।

1 'अप्पग' समास के अन्त में अर्थ होता है 'बना हुआ' ।

114 देहो = देह । य = और । मणो = मन । वाणी = वाणी । पोगलदव्वप्पगत्ति
= पुद्गल द्रव्य से बने हुए । णिहिट्ठा = कहे गये । पोगलदव्वपि =
पुद्गल द्रव्य भी । पुणो = और । पिडो = पिण्ड । परमाणुदव्वाणं =
परमाणु द्रव्यो का ।

115 अपदेसो (अपदेस) 1/1 परमाणू (परमाणु) 1/1 पदेसमेत्तो (पदेसमेत्त)
1/1 वि य (अ) = तथा सयमसद्दो [(सय) + (असद्दो)] सय (अ) =
स्वय असद्दो (असद्द) 1/1 वि जो (ज) 1/1 सवि णिद्धो (णिद्ध) भूक
1/1 अति वा (अ) = अथवा लुक्खो (लुक्ख) 1/1 वि वा (अ) = और
दुपदेसादित्तमणुहवदि [(दु) + (पदेस) + (आदित्त) + (अणुहवदि)]
[(दु) - (पदेस) - (आदित्त) 2/1] अणुहवदि (अणुहव) व 3/1 सक ।

115 अपदेसो = प्रदेशरहित । परमाणू = परमाणु । पदेसमेत्तो = एक प्रदेश
जितना । य = तथा । सयमसद्दो = सय + असद्दो = स्वय, शब्दरहित ।
जो = जो । णिद्धो = स्निग्ध । वा = अथवा । लुक्खो = रूखा । वा = और ।
दुपदेसादित्तमणुहवदि = दो प्रदेश आदिपने को ग्रहण करता है ।

116 एगुत्तरमेगादी [(एगुत्तर) + (एग) + (आदी)] एगुत्तर (अ) = एक के
वाद में [(एग) - (आदि)¹ 1/1] अणुस्स (अणु) 6/1 निद्धत्तणं

(णिद्धत्तण) 2/1 व (अ) = और लुक्खत्तं (लुक्खत्त) 2/1 परिणामादो (परिणाम) 5/1 भण्णिद (भण) भूक्क 1/1 जाव (अ) = तक अणंत-त्तमणुहवदि [(अणत्त) + (अणुहवदि)] अणत्त (अणत्त) 1/1 अणुहवदि (अणुहव) व 3/1 सक ।

1 समास के अन्त में 'आदि' का अर्थ होता है 'आरम्भ करके' ।

116 एगुत्तरमेगादी = एक के बाद में, एक से आरम्भ करके । अणुस्स = परमाणु के । णिद्धत्तण = स्निग्धता । व = और । लुक्खत्त = रूक्षता । परिणामादो = परिणामन के कारण । भण्णिद = कही गई । जाव = तक । अणंतत्तम-णुहवदि = अणंतत्त + अणुहवदि = अनन्तता, ग्रहण करता है ।

117. णिद्धा (णिद्ध) भूक्क 1/2 अनि वा (अ) = अथवा लुक्खा (लुक्ख) 1/2 वि अणुपरिणामा [(अणु) - (परिणाम) 1/2] समा (सम) 1/2 वि व (अ) = पादपूरक विसमा (विसम) 1/2 वि समदो (सम) पचमी अर्थक 'दो' प्रत्यय दुराधिगा [(दु) + (र) अ + (अधिगा)] [(दु) - (र) अ = ही - (अधिग) 1/2 वि] जदि (अ) = यदि बज्झन्ति (वज्झन्ति) व कर्म 3/2 सक हि (अ) = निश्चय ही आदिपरिहीणा [(आदि)¹ - (परिहीण) भूक्क 1/2 अनि] ।

1 आदि = प्रथम अश

117 णिद्धा = स्निग्ध । वा = अथवा । लुक्खा = रूक्ष । अणुपरिणामा = परमाणुओं का परिणामन । समा = सम । विसमा = विषम । समदो = प्रत्येक सत्त्या से (इसी प्रकार) । दुराधिगा = दो ही अधिक । जदि (अ) = यदि । बज्झन्ति = बाधे जाते हैं । हि = निश्चय ही । आदिपरिहीणा = प्रथम अशरहित ।

118 णिद्धत्तणेण¹ (णिद्धत्तण) 3/1 दुगुणो [(दु) वि - (गुण) 1/1] चदुगुणणिद्धेण [(चदु) वि - (गुण) - (णिद्ध) 3/1] बघमणुहवदि [(वघ) + (अणुहवदि)] वघ (वघ) 2/1 अणुहवदि (अणुहव) व 3/1 मक लुक्खेण¹ (लुक्ख) 3/1 वा (अ) = और तिगुणिदो [(ति) - (गुणि) पचमी अर्थक दो प्रत्यय] अणु (अणु) मूल शब्द 1/1 बज्झदि (वज्झदि) व कर्म 3/1 सक अनि पचगुणजुत्तो [(पच) वि - (गुण) - (जुत्त) भूक्क 1/1 अनि] ।

1 कभी कभी सप्तमी के स्थान पर तृतीया का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-137) ।

118 णिद्धतणेण = स्निग्धता से → स्निग्धता मे । दुग्गुणौ = दो अंश । चदुग्गुणणिद्धेण = चार अंश स्निग्ध के साथ । बंधमणुहवदि = बंध अनुभव करता है । लुक्खेण = रूक्षता से → रूक्षता मे । वा = और । तिग्गुणिदो = तीन अंश-युक्त से । अणु = परमाणु । बज्जभदि = बाधा जाता है । पंचगुणजुत्तो = पांच अंशयुक्त ।

119 दुप्पेसादि [(दु) वि + (पदेस) + (आदि)] [(दु) वि - (पदेस) - (आदि) मूल शब्द 1/1] खघा (खघ) 1/2 सुहुमा (सुहुम) 1/1 वि वा (अ) = तथा बादरा (बादर) 1/2 वि ससंठाणा [(स) वि - (संठाण) 1/2] पुढविजलतेउवाळ [(पुढवि) - (जल) - (तेउ) - (वाउ) 1/1] सगपरिणामेहि [(सग) वि - (परिणाम) 3/2] जायते (जा) व 3/2 सक ।

119 दुप्पेसादि = दो प्रदेश से आरम्भ करके । खघा = स्कन्ध । सुहुमा = सूक्ष्म । वा = तथा । बादरा = स्थूल । ससंठाणा = आकारसहित । पुढविजलते-उवाळ = पृथिवी, जल, अग्नि, वायु । सगपरिणामेहि = स्वकीय परिणमन के द्वारा । जायते = उत्पन्न होते हैं ।

120 अइथूलथूल [(अइ) - (थूल) - (थूल) मूल शब्द 1/1 वि] थूल (थूल) 1/1 वि थूलसुहुम [(थूल) वि - (सुहुम) 1/1 वि] सुहुमथूल [(सुहुम) - (थूल) 1/1 वि] च (अ) = और सुहुम (सुहुम) 1/1 वि अइसुहुम [(अइ) वि - (सुहुम) 1/1 वि] इदि (अ) = इस प्रकार घरादिय [(घरा) + (आदिय)] [(घरा) - (आदिय) 1/1] होदि (हो) व 3/1 अक छब्भेय [(छ) वि - (ब्भेय) 1/1] ।

120 अइथूलथूल = अति स्थूल स्थूल । थूल = स्थूल । थूलसुहुम = स्थूल-सूक्ष्म । सुहुमथूल = सूक्ष्म-स्थूल । च = और । सुहुम = सूक्ष्म । अइसुहुम = अति सूक्ष्म । इदि = इस प्रकार । घरादिय = पृथिवी से आरम्भ करके । होदि = होता है । छब्भेय = छह भेद ।

121 भूपच्चदमादीया [(भू) + (पच्चद) + (आदीया)] [(भू) - (पच्चद) 1/1] आदीया (आदीय) 1/2 भण्णिदा (भण) भूक 1/2 अइथूलथूलमिदि [(अइ) + (थूल) + (थूल) + (इदि)] [(अइ) वि - (थूल) - (थूल) 1/1] इदि = शब्दस्वरूपद्योतक खघा (खघ) 1/2 थूला (थूल) 1/2 वि इदि = शब्दस्वरूपद्योतक विण्णेया (विण्णेय) विधिक्क 1/2 अनि

सप्पीजसतैलमादीया [(सप्पी) + (जल) + (तेल) + (आदीया)]
[(सप्पी) - (जल) - (तेल) 1/1] आदीया (आदीय) 1/2 ।

121. भूपद्वदमादीया = भू, पवंत आदि । भणिदा = कहे गये । अहथूलथूलमिदि = अति स्थूल स्थूल । खधा = स्कन्ध । थूला = स्थूल । विण्णेया = समझे जाने चाहिए । सप्पीजसतैलमादीया = घी, जल, तेल आदि ।

122 छायातवमादीया [(छाया) + (आतव) + (आदीया)] [(छाया) - (आतव) 1/1] आदीया (आदीय) 1/2 थूलेदरखधमिदि [(थूल) + (इदर) + (खध) + (इदि)] [(थूल) - (इदर) - (खध) 1/1] इदि (अ) = शब्दस्वरूपद्योतक विद्याणाहि (विद्याण) विधि 2/1 सक सुहुम (सुहुम) मूलशब्द 1/2 वि थूलेदि [(थूल) + (इदि)] थूल (थूल) मूल शब्द 1/2 वि इदि (अ) = शब्दस्वरूप द्योतक भणिया (भण) भूक 1/2 खधा (वध) 1/2 चउरखविसया [(चउरख) - (विसय) 1/2] य (अ) = और ।

122 छायातवमादीया = छाया, धूप आदि । थूलेदरखधमिदि = स्थूल-सूक्ष्म स्कन्ध । विद्याणाहि = जानो । सुहुम = सूक्ष्म । थूलेदि = स्थूल । भणिया = कहे गये । खधा = स्कन्ध । चउरखविसया = चार इन्द्रियो के विषय । य = और ।

123 सुहुमा (सुहुम) 1/2 वि हवति (हव) व 3/2 अक खधा (खध) 1/2 पावोग्गा = पाओग्गा = पाउग्गा (पउग्ग) 1/2 वि कम्मवग्गणस्स [(कम्म) - (वग्गण) 6/1] पुणो = और तव्विवरीया [(त) - (व्विवरीय) 1/2 वि] खधा (खध) 1/2 अहसुहुमा [(अह) वि - (सुहुम) 1/2 वि] इदि (अ) = इस प्रकार परुवेदि (परुव) व 3/2 सक ।

123 सुहुमा = सूक्ष्म । हवति = होते हैं । खधा = स्कन्ध । पावोग्गा = पाओग्गा = योग्य । कम्मवग्गणस्स = कर्म वर्गणा के । पुणो = और । तव्विवरीया = इसके विपरीत । खधा = स्कन्ध । अहसुहुमा = अति सूक्ष्म । इदि = इस प्रकार । परुवेदि = प्रतिपादन करते हैं ।

124 अत्तादि [(अत्त) + (आदि)] [(अत्त) - (आदि) मूलशब्द 1/1] अत्तमज्झ [(अत्त) - (मज्झ) 1/1] अत्तत [(अत्त) + (अत)]

[(अत्त) - (अत) 1/1 वि] णेव (अ) = नहीं इदिए¹ (इदिअ) 7/1
गेज्झ (गेज्झ) विधि कृ 1/1 अणि अविभागी (अविभागि) 1/1 वि
ज (ज) 1/1 सवि दव्व (दव्व) 1/1 परमाणू (परमाणु) 1/1 त (त)
1/1 सवि विद्याणाहि (वियाण) विधि 2/1 सक ।

1 कभी कभी तृतीया के स्थान पर सप्तमी का प्रयोग पाया जाता है
(हे प्रा व्या 3-135) ।

124 अत्तादि = स्व, आदि । अत्तमज्झ = स्व, मध्य । अत्तत = स्व, अन्त । णेव =
नहीं । इदिए = इन्द्रिय मे → इन्द्रिय द्वारा । गेज्झ = ग्रहण योग्य ।
अविभागी = भेदरहित । ज = जो । दव्व = द्रव्य । परमाणू = परमाणु ।
त = वह । विद्याणाहि = जानो ।

125 एयरंसरूवगघ [(एय) वि - (रस) - (रूव) - (गघ) 1/1] दो (दो)
1/1 वि फास (फास) 1/1 त (त) 1/1 सवि हवे (हव) व 3/1 अक
सहावगुण (सहावगुण) 1/1 वि विहावगुणमिदि [(विहावगुण) + (इदि)]
विहावगुण (विहावगुण) 1/1 वि इदि (अ) = शब्दस्वरूप द्योतक भण्णिद
(भण) भूकृ 1/1 जिणसमये [(जिण) - (समय) 7/1] सव्वपयडत्तं
[(सव्व) वि - (पयडत्त) 1/1] ।

125 एयरंसरूवगघ = एक रस, रूप, गघ । दो = दो । फास = स्पर्श । त = वह ।
हवे = होता है । सहावगुण = स्वभाव गुणवाला । विहावगुणमिदि =
विभावगुणवाला । भण्णिद = कहा गया । जिणसमये = जिनशासन मे ।
सव्वपयडत्त = सबके लिए प्रकटता गुणवाला ।

126 अण्णनिरावेक्खो [(अण्ण) वि - (निरावेक्ख) 1/1] जो (ज) 1/1 सो
परिणामो (परिणाम) 1/1 सो (त) 1/1 सवि सहावपज्जाओ
[(सहाव) - (पज्जाअ) 1/1] खधसरूवेण [(खध) - (सरूव) 3/1]
पुणो (अ) = और परिणामो (परिणाम) 1/1 सो (त) 1/1 सवि
विहावपज्जाओ [(विहाव) - (पज्जाअ) 1/1] ।

126 अण्णनिरावेक्खो = दूसरो की अपेक्षारहित परिणमन । जो = जो ।
परिणामो = परिणमन । सो = वह । सहावपज्जाओ = स्वभाव-परिणमन ।
खधसरूवेण = स्कन्धरूप से । पुणो = और । परिणामो = परिणमन ।
सो = वह । विहावपज्जाओ = विभाव-परिणमन ।

127 धम्मत्थिकायमरस [(धम्मत्थिकाय) + (अरस)] धम्मत्थिकाय (धम्मत्थिकाय) 1/1 अरस (अरस) 1/1 वि अवण्णगघ [(अवण्ण) + (अगघ)] अवण्ण (अवण्ण) 1/1 वि अगघ (अगघ) 1/1 वि असद्दम्प्फास [(असद्द) + (अम्प्फास)] असद्द (असद्द) 1/1 वि अम्प्फास (अम्प्फास) 1/1 वि लोगोगाढ [(लोग) + (ओगाढ)] [लोग - (ओगाढ) 1/1 वि] पुट्ठं (पुट्ठ) भूक 1/1 अनि पिहुलमसखादियपदेस [(पिहुल) + (असखादियपदेस)] पिहुल (पिहुल) 1/1 वि असखादियपदेस (असखादियपदेस) 1/1 वि ।

127 धम्मत्थिकायमरस = धर्मास्तिकाय, रसरहित । अवण्णगघ = वर्णरहित, गघरहित । असद्दम्प्फास = शब्दरहित, स्पर्शरहित । लोगोगाढ = लोक मे व्याप्त । पुट्ठं = छुए हुए । पिहुलमसखादियपदेस = व्याप्त, असरयात प्रदेश-वाला ।

128 उदयं (उदय) 1/1 जह (अ) = जिस प्रकार मच्छाण (मच्छ) 6/2 गमणानुगहयर [(गमण) + (अणुगहयर)] [(गमण) - (अणुगहयर) 1/1 वि] हवदि (हव) व 3/1 अक लोए (लोअ) 7/1 तह (अ) = उसी प्रकार जीवपुग्गलाण [(जीव) - (पुग्गल) 6/2] धम्म (धम्म) 1/1 दव्व (दव्व) 1/1 वियाणेहि (वियाण) विधि 2/1 सक ।

128 उदय = जल । जह = जिस प्रकार । मच्छाण = मछलियों के । गमणानुगहयर = गमन मे उपकार करनेवाला । हवदि = होता है । लोए = लोक मे । तह = उसी प्रकार । जीवपुग्गलाण = जीव और पुद्गलो के लिए । धम्म = धर्म । दव्व = द्रव्य । वियाणेहि = समझो ।

129 जह (अ) = जिस प्रकार हवदि (हव) व 3/1 अक धम्मदव्व (धम्मदव्व) 1/1 तह (अ) = उसी प्रकार त (त) 2/1 सवि जाणेह (जाण) विधि 2/2 संक दव्वमघमक्ख [(दव्व) + (अघम) + (अक्ख)] दव्व (दव्व) 2/1 [(अघम) - (अक्खा)¹ 2/1 वि] ठिदिकिरियाजुसाण [(ठिदि) - (किरिया) - (जुत्त) भूक 4/2 अनि] कारणभूद [(कारण) - (भूद) भूक 1/1 अनि] तु (अ) = किन्तु पुढवी (पुढवी) 1/1 व (अ) = की तरह ।
1 समास के अन्त मे अर्थ होता है 'नामवाला' ।

129 जह (अ) = जिस प्रकार । हवदि = होता है । धम्मदव्व = धर्मास्तिकाय द्रव्य । तह = उसी प्रकार । त = उस को । जाणेह = जानो । दव्वमघमक्ख

= दन्व + अघम + अक्खं = उस अघमास्तिकाय नामवाले द्रव्य को ।
जाणेह = जानो । ठिदिकिरियाजुत्ताण = स्थिति क्रिया मे तत्पर के लिए ।
कारणभूद = कारण बना हुआ । तु = किन्तु । पुद्वी = पृथ्वी । व = की
तरह ।

130. ए (अ) = नही य (अ) = तथा गच्छदि (गच्छ) व 3/1 सक धम्मत्थी
(धम्मत्थि) 1/1 गमण (गमण) 2/1 ण (अ) = नही करेदि (कर) व
3/1 सक अण्णदवियस्स¹ [(अण्ण)-(दविय) 6/1] हवदि (हव) व
3/1 अक गती² (गति) 2/2 स (स) मूलशब्द 3/1 वि प्सरो (प्सर)
1/1 जीवाण (जीव) 6/2 पुगलाण (पुगल) 6/2 च (अ) = और ।

1 कभी-कभी द्वितीया के स्थान पर पष्ठी का प्रयोग पाया जाता है
(हे प्रा व्या-3-134) ।

2 कभी-कभी सप्तमी के स्थान पर द्वितीया का प्रयोग पाया जाता है
(हे प्रा व्या-3-137) ।

- 130 ए = नही । य = तथा । गच्छदि = गतिशील नही होता है । धम्मत्थी =
घमास्तिकाय । गमण = गति । ण = नही । करेदि = प्रदान करता है ।
अण्णदवियस्स = दूसरे द्रव्यो को । हवदि = होता है । गती = गति के-
गति मे । स = स्व से । प्सरो = फैलाव । जीवाणं = जीवो (की) ।
पुगलाण = पुद्गलो की । च = और ।

- 131 विज्जदि (विज्ज) व 3/1 अक जेसि (ज) 6/2 स गमण (गमण) 1/1 ठाणं
(ठाण) 1/1 पुण (अ) = फिर तेसिमेव [(तेसि) + (एव)] तेसि (त)
6/2 स एव (अ) = ही सभवदि (सभव) व 3/1 अक ते (त) 1/2 सवि
सगपरिणामोहि [(सग) वि - (परिणाम) 3/2] दु (अ) = अत गमण
(गमण) 2/1 ठाण (ठाण) 2/1 च (अ) = और कुव्वति (कुव्व) व
3/2 सक ।

- 131 विज्जदि = होती है । जेसि = जिन की । गमण = गति । ठाणं = स्थिति ।
पुण = फिर । तेसिमेव = उन्ही की । सभवदि = होती है । ते = वे ।
सगपरिणामोहि = अपने परिणामन के द्वारा । दु = अत । गमणं = गति(को) ।
ठाण = स्थिति को । च = और । कुव्वति = उत्पन्न करते हैं ।

132 गमणणिमित्त [(गमण) - (णिमित्त) 1/1] धम्म (धम्म) 1/1 अघम्म (अघम्म) 1/1 ठिदि (ठिदि) मूलशब्द 7/1 जीवपोग्गलाण [(जीव) - (पोग्गल) 6/2] च (अ) = और अवगहण (अवगहण) 1/1 आयास (आयास) 1/1 जीवादीसव्वदब्बाणं [(जीव) + (आदी) + (सव्व) + (दब्बाण)] [(जीव) - (आदी)¹ - (सव्व) वि - (दब्ब) 6/2] ।

1 समास मे 'आदि' का 'आदी' किया जा सकता है (हे प्रा व्या 1-67) ।

132 गमणणिमित्त = गति मे निमित्त । धम्म = धर्मास्तिकाय । अघम्म = अघर्मास्तिकाय । ठिदि = स्थिति मे । जीवपोग्गलाण = जीवो, पुद्गलो की । च = और । अवगहण = ठहरने का स्थान । आयास = आकाश । जीवादीसव्वदब्बाण = जीव आदि सभी द्रव्यो के लिए ।

133 सव्वेसि (सव्व) 6/2 स जीवाणं (जीव) 6/2 सेसाण (सेस) 6/2 तह य (अ) = और इसी प्रकार पुग्गलाण (पुग्गल) 6/2 च(अ) = और ज(ज) 1/1 सवि देदि (दा) व 3/1 सक विवरमखिल [(विवर) + (अखिल)] विवर (विवर) 2/1 अखिल (अखिल) 2/1 वि त (त) 1/1 सवि लोए (लोअ) 7/1 हवदि (हव) व 3/1 अक आयास (आयास) 1/1 ।

133 सव्वेसि = सभी (के लिए) । जीवाण = जीवो के लिए । सेसाण = शेष के लिए । तह य = और इसी प्रकार । पुग्गलाण = पुद्गलो के लिए । च = और । जं = जो । देदि = देता है । विवरमखिल = पूरा स्थान । त = वह । लोए = लोक मे । हवदि = होता है । आयास = आकाश ।

134 पुग्गलजीवणिबद्धो [(पुग्गल) - (जीव) - (णिबद्ध) भूक्त 1/1 अनि] धम्माधम्मत्थिकायकालइद्धो [(धम्म) + (अधम्मत्थिकाय) + (काल) + (अइद्धो)] [(धम्म) - (अधम्मत्थिकाय) - (काल) - (अइद्ध) 1/1 वि] वट्टदि (वट्ट) व 3/1 अक आयासे (आयास) 7/1 जो (ज) 1/1 सवि लोगो (लोग) 1/1 सो (त) 1/1 सवि सव्वकाले [(सव्व) वि - (काल) 7/1] दु (अ) = पादपूरक ।

134 पुग्गलजीवणिबद्धो = पुद्गल और जीवो से जुड़ा हुआ । धम्माधम्मत्थिकायकालइद्धो = धर्मास्तिकाय, अघर्मास्तिकाय, काल से युक्त । वट्टदि = है । आयासे = आकाश मे । जो = जो । लोगो = लोक । सो = वह । सव्वकाले = सभी समय मे ।

- 135 सवभावसभावाण [(सवभाव) - (सभाव)¹ 6/2] जीवाण¹ (जीव) 6/2 तह य (अ) = उसी प्रकार पोगलाण (पोगल) 6/2 च (अ) = और परियट्टणसंभूदो [(परियट्टण) - (सभूद) भूक 1/1 अनि] कालो (काल) 1/1 गियमेण (क्रिविअ) = अनिवार्यत पणत्तो = कहा गया ।

1 कमी कमी सप्तमी के स्थान पर पण्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-134) ।

- 135 सवभावसभावाण = अस्तित्व स्वभाववाले । जीवाणं = जीवो (मे) । तह य = उसी प्रकार । पोगलाण = पुद्गलो मे । च (अ) = और । परियट्टण-सभूदो = परिवर्तन, उत्पन्न हुआ । कालो = काल । गियमेण = अनिवार्यत । पणत्तो = कहा गया ।

- 136 एत्थि (अ) = नहीं चिर (अ) = दीर्घ काल वा = और खिप्प (अ) = तुरन्त मत्तारहिदं [(मत्ता) - (रहिद) 1/1 वि] तु (अ) = तथा सा (ता) 1/1 सवि वि (अ) = मी खलु (अ) = पादपूरक मत्ता (मत्ता) 1/1 पुगलदव्वेण [(पुगल) - (दव्व) 3/1] विणा (अ) = विना तम्हा (अ) = इसलिए कालो (काल) 1/1 पडुच्चभवो [(पडुच्च) अ = आश्रय करके - (भव)¹ 1/1 वि] ।

1. समास के अन्त मे ।

- 136 एत्थि = नहीं । चिर = दीर्घकाल । वा = और । खिप्पं = तुरन्त । मत्ता-रहिद = माप के विना । तु = तथा । सा = वह । वि = मी । मत्ता = माप । पुगलदव्वेण = पुद्गल द्रव्य के । विणा = विना । तम्हा = इसलिए । कालो = काल । पडुच्चभवो = आश्रय से उत्पन्न ।

- 137 कालो (काल) 1/1 परिणामभवो [(परिणाम) - (भव) 1/1 वि] परिणामो (परिणाम) 1/1 दव्वकालसंभूदो [(दव्वकाल) - (सभूद) भूक 1/1 अनि] दोण्ह (दो) 6/2 वि एस (एत) 1/1 सवि सहावो (सहाव) 1/1 कालो (काल) 1/1 खणमगुरो (खणमगुर) 1/1 वि गियदो (गियद) 1/1 वि ।

=

- 137 कालो = काल । परिणामभवो = परिवर्तन से उत्पन्न । परिणामो = परिवर्तन । दव्वकालसंभूदो = द्रव्य काल से उत्पन्न । दोण्हं = दोनो का । एस = यह । सहावो = स्वभाव । कालो = काल । खणमगुरो = नश्वर । गियदो = स्थायी ।

138 जीवादीदव्वाण [(जीव) + (आदी) + (दव्वाण)] [(जीव)-(आदी)-(दव्व) 6/2] परिवट्टकारण [(परिवट्टण)-(कारण) 1/1] हवे (हव) व 3/1 अक कालो (काल) 1/1 घम्मादिचउण्णाण [(घम्म) + (आदि) + (चउ) + (अण्णाण)] [(घम्म)-(आदि)-(चउ)-(अण्ण)¹ 6/2 वि] सहावगुणपज्जया [(स) वि-(हाव)-(गुण)-(पज्जय) 1/2] होंति (हो) व 3/2 अक ।

1 कमी-कमी सप्तमी के स्थान पर षष्ठी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-134) अण्णाण→ण्णाण (स्वरलोप, पृ 123, अभिनव प्राकृत व्याकरण) ।

138 जीवादीदव्वाण = जीव आदि द्रव्यो के । परिवट्टकारण = परिवर्तन का कारण । हवे = होता है । कालो = काल । घम्मादिचउण्णाण = घर्मादि चार अन्य । सहावगुणपज्जया = स्वभावगुणपर्याय । होति = होती हैं ।

139 दव्व (दव्व) 1/1 सल्लक्खणिय (सल्लक्खणिय) 1/1 वि उत्पादव्वयधुवत्तसजुत्त (उत्पाद) - (व्वय) - (धुवत्त)-(सजुत्त) भूक्त 1/1 अनि] गुणपज्जयासय [(गुण) + (पज्जय) + (आसय)] [(गुण)-(पज्जय)-(आसय) 1/1] वा (अ) = और ज (ज) 1/1 सवि त (त) 1/1 सवि भण्णति (भण्ण) व 3/2 सक सव्वण्हू (सव्वण्हू) 1/2 वि ।

139 दव्व = द्रव्य । सल्लक्खणिय = सत्लक्षणयुक्त । उत्पादव्वयधुवत्तसजुत्त = उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य से सहित । गुणपज्जयासय = गुण और पर्याय का आश्रय । वा = और । ज = जो । त = वह । भण्णति = कहते हैं । सव्वण्हू = सर्वज्ञ ।

140 सत्ता (सत्ता) 1/1 सव्वपयत्था [(सव्व)-(पयत्था) 1/1] वि] सविस्सरूवा (सविस्सरूवा) 1/1 वि अणतपज्जाया [(अणत) वि-(पज्जाया) 1/1 वि] भगुप्पादधुवत्ता [(भग) + (उप्पाद) + (धुवत्ता)] [(भग)-(उप्पाद)-(धुवत्ता)] वि] सप्पडिवक्खा (सप्पडिवक्खा) 1/1 वि हवदि (हव) व 3/1 अक एक्का (एक्का) 1/1 वि ।

140 सत्ता = सत्ता । सव्वपयत्था = सर्वपदार्थमय । सविस्सरूवा = अनेक प्रकार सहित । अणतपज्जाया = अनन्त पर्यायवाली । भगुप्पादधुवत्ता = उत्पाद,

व्यय और ध्रुवतामय । सप्पडिवक्खा = विरोधी पहलू सहित । हवदि = होती है । एक्का = एक ।

141 उत्पत्ती (उत्पत्ति) 1/1 व = और विणासो (विणास) 1/1 दव्वस्स (दव्व) 6/1 य (अ) = ही णत्थि = न अत्थि (अ) = है (अस्तित्व) सब्भावो (सम्भाव) 1/1 विगमुप्पादधुवत्त [(विगम) + (उप्पाद) + (धुवत्त)] [(विगम)-(उप्पाद)-(धुवत्त) 2/1] करेत्ति (कर) व 3/2 सक तस्सेव [(तस्स) + (एव)] तस्स (त) 6/1 स एव (अ) = ही पज्जाया (पज्जाय) 1/2 ।

141 उत्पत्ती = उत्पत्ति । व = और । विणासो = विनाश । दव्वस्स = द्रव्य की । य = ही । णत्थि = न । अत्थि = अस्तित्व । सब्भावो = स्वभाववाला । विगमुप्पादधुवत्त = नाश, उत्पत्ति, ध्रुवता । करेत्ति = प्रकाशित करती हैं । तस्सेव = उसकी ही । पज्जाया = पर्यायें ।

142 पज्जयविजुद [(पज्जय)-(विजुद) 1/1 वि] दव्व (दव्व) 1/1 दव्वविजुत्ता [(दव्व)-(विजुत्त) 1/2 वि] य (अ) = भी पज्जया (पज्जय) 1/2 णत्थि(अ) = नहीं है दोण्ह (दो) 6/2 अणणभूद [(अणण)-(भूद) भूक्क 1/1 अनि] भाव (भाव) 1/1 समणा (समण) 1/2 परूवति (परूव) व 3/2 सक आर्ष ।

142 पज्जयविजुद = पर्यायरहित । दव्व = द्रव्य । दव्वविजुत्ता = द्रव्यरहित । य = भी । पज्जया = पर्याय । णत्थि = नहीं है । दोण्ह = दोनों का । अणणभूद = अभिन्न बना हुआ । भाव = अस्तित्व । समणा = श्रमण । परूवति = कहते हैं ।

143 दव्वेण (दव्व) 3/1 विणा (अ) = बिना । एण (अ) = नहीं गुणा (गुण) 1/2 गुणेहिं (गुण) 3/2 दव्व (दव्व) 1/1 एण (अ) = नहीं सभवदि (सभव) व 3/1 अक अव्वदिरित्तो (अव्वदिरित्त) भूक्क 1/1 अनि भावो (भाव) 1/1 दव्वगुणाण [(दव्व)-(गुण) 6/2] हवदि (हव) व 3/1 अक तम्हा = इसलिए ।

143 दव्वेण = द्रव्य के । विणा = बिना । एण = नहीं । गुणा = गुण । गुणेहिं = गुणों के । दव्व = द्रव्य । विणा = बिना । सभवदि = होता है । अव्वदिरित्तो = अभिन्न । भावो = अस्तित्व । दव्वगुणाण = द्रव्य और गुणों का । हवदि = होता है । तम्हा = अतः ।

144 भावस्स (भाव) 6/1 एत्थि = नही णासो (णास) 1/1 अभावस्स (अभाव) 6/1 चेव (अ) = पादपूरक उत्पादो (उत्पाद) 1/1 गुणपज्जयेसु [(गुण)-(पज्जय)¹ 7/2] भावा (भाव) 1/2 उत्पादवए [(उत्पाद)-(वअ) 2/2] पकुव्वति (पकुव्व) व 3/2 सक ।

1 कभी-कभी तृतीया के स्थान पर सप्तमी का प्रयोग पाया जाता है (हे प्रा व्या 3-135) ।

144 भावस्स = सत् का । एत्थि = नही । णासो = नाश । एत्थि = नही । अभावस्स = असत् का । उत्पादो = उत्पाद । गुणयज्जयेसु = गुण-पर्यायो मे → गुण-पर्यायो द्वारा । भावा = द्रव्य । उत्पादवए = उत्पाद-व्यय । पकुव्वति = करते हैं ।

145 भावा (भाव) 1/2 जीवादीया [(जीव) + (अदीया)] [(जीव)-(अदीय) 1/2] जीवगुणा [(जीव)-(गुण) 1/2] चेदणा (चेदणा) 1/1 य (अ) = और उवओगो (उवओग) 1/1 सुरणरणारयतिरिया [(सुर)-(णर)-(णारय) वि-(तिरिय) 1/2] जीवस्स (जीव) 6/1 य (अ) = और पज्जया (पज्जय) 1/2 बहुगा (बहुग) 1/1 वि ।

145. भावा = सत् । जीवादीया = जीव आदि । जीवगुणा = जीव के गुण । चेदणा = चेतना । य = और । उवओगो = ज्ञान । सुरणरणारयतिरिया = देव, मनुष्य, नारकी और तिर्यञ्च । जीवस्स = जीव की । य = और । पज्जया = पर्याय । बहुगा = अनेक ।

146 मणुसत्तणेण (मणुसत्तण) 3/1 णट्ठो (णट्ठ) भूकु 1/1 अनि देही (देहि) 1/1 देवो (देव) 1/1 हवेदि (हव) व 3/1 अक इदरो (इदर) 1/1 वि वा (अ) = अथवा उभयत्त (उभयत्त) मूलशब्द 7/1 वि जीवभावो [(जीव)-(भाव) 1/1] ए (अ) = न णस्सदि (णस्स) व 3/1 अक जायदे (जा → जाय) व 3/1 अक अण्णो (अण्ण) 1/1 वि ।

146 मणुसत्तणेण = मनुष्यत्व से । णट्ठो = लुप्त हुआ । देही = जीव । देवो = देव । हवेदि = होता है । इदरो = अन्य कोई पर्यायवाला । वा = अथवा । उभयत्त = दोनों में । जीवभावो = जीव पदार्थ । ए = न । णस्सदि = नष्ट होता है । ण = न । जायदे = उत्पन्न होता है । अण्णो = नया ।

147 सो (त) 1/1 सवि चेव (अ) = ही जादि (जा) व 3/1 अक मरण (मरण) 2/1 जादि (जा) व 3/1 सक ए (अ) = न णट्ठी (णट्ठ) भूक 1/1 अनि चेव (अ) = ही उत्पण्णी (उत्पण्ण) भूक 1/1 अनि उत्पण्णी (उत्पण्ण) भूक 1/1 अनि य (अ) = और विणट्ठी (विणट्ठ) भूक 1/1 अनि देवो (देव) 1/1 मणुसो (मणुस) 1/1 त्ति (अ) = इस प्रकार पज्जाओ (पज्जाय) 1/1 ।

147 सो = वह । चेव = ही । जादि = उत्पन्न होता है । मरण = मरण को । जादि = प्राप्त होता है । ण = न । णट्ठी = नष्ट हुआ । ए = न । चेव = ही । उत्पण्णी = उत्पन्न हुआ । उत्पण्णी = उत्पन्न हुई । य = और । विणट्ठी = नष्ट हुई । देवो = देव । मणुसो = मनुष्य । त्ति = इस प्रकार । पज्जाओ = पर्याय ।

148 अत्थो (अत्थ) 1/1 खलु (अ) = पादपूरक दब्बमओ (दब्बमअ) 1/1 दब्बाणि (दब्ब) 1/2 गुणप्पगाणि [(गुण) + (अप्पगाणि)] [(गुण) - (अप्पग) 1/2 वि] भण्णिदाणि (भण) भूक 1/2 तेहिं (त) 3/2 सवि पुणो (अ) = और पज्जाया (पज्जाय) 1/2 पज्जयमूढा [(पज्जय) - (मूढ) 1/2 वि] हि (अ) = ही परसमया (परसमय) 1/2 वि ।

148 अत्थो = पदार्थ । दब्बमओ = द्रव्यमय । दब्बाणि = द्रव्य । गुणप्पगाणि = गुणस्वरूपवाले । भण्णिदाणि = कहे गये । तेहिं = उन से । पुणो = और । पज्जाया = पर्याय । पज्जयमूढा = पर्यायो मे मोहित । हि = ही । परसमया = मूर्च्छित ।

149 जे (ज) 1/2 सवि पज्जयेसु (पज्जय) 7/2 णिरदा (णिरद) भूक 1/2 अनि जीवा (जीव) 1/2 परसमयिग (परसमयिग) मूलशब्द 1/2 वि त्ति (अ) = शब्दस्वरूपद्योतक णिद्धिट्ठा (णिद्धिट्ठ) भूक 1/2 अनि आदसहावम्मि [(आद) - (सहाव) 7/1] ठिदा (ठिद) भूक 1/2 अनि ते (त) 1/2 सवि सगसमया [(सग) वि - (समय) 1/2] मुणेदब्बा (मुण) विधि कृ 1/2 ।

149 जे = जो । पज्जयेसु = पर्यायो मे । णिरदा = लीन । जीवा = जीव । परसमयिग = मूर्च्छित । णिद्धिट्ठा = कहे गये । आदसहावम्मि = आत्म स्वभाव मे । ठिदा = ठहरे हुए । ते = वे । सगसमया = जाग्रत । मुणेदब्बा = समझे जाने चाहिए । □

आचार्य कुन्दकुन्द : द्रव्य विचार

गाथा-क्रम तथा मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम

गाथा- क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम	गाथा- क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम
1	प्रवचनसार 2 6	17	प्रवचनसार 2 48
2	प्रवचनसार 2 13	18	प्रवचनसार 2 52
3	प्रवचनसार 2 35	19	पञ्चास्तिकाय 7
4	पञ्चास्तिकाय 122	20	पञ्चास्तिकाय 27
5	पञ्चास्तिकाय 125	21	पञ्चास्तिकाय 30
6	नियमसार 9	22	पञ्चास्तिकाय 109
7	पञ्चास्तिकाय 97	23	नियमसार 49
8	पञ्चास्तिकाय 99	24	प्रवचनसार 2 33
9	प्रवचनसार 2 40	25	पञ्चास्तिकाय 38
10-11	प्रवचनसार 2 41-42	26	प्रवचनसार 1 31
12	पञ्चास्तिकाय 124	27	प्रवचनसार 2 32
13	पञ्चास्तिकाय 98	28	पञ्चास्तिकाय 39
14	नियमसार 34	29	पञ्चास्तिकाय 112
15-16	नियमसार 35-36	30	पञ्चास्तिकाय 113

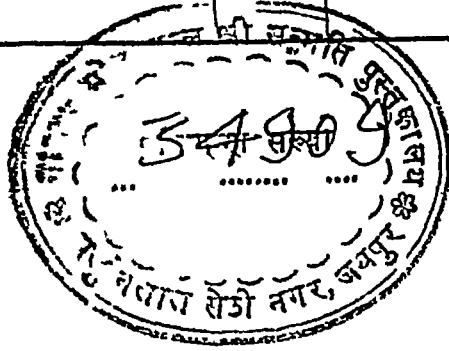
द्रव्य-विचार

गाथा- क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम	गाथा- क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम
31	पचास्तिकाय 114	49	प्रवचनमार 2 102
32	पचास्तिकाय 115	50	प्रवचनसार 2 99
33	पचास्तिकाय 116	51	प्रवचनसार 2 101
34	पचास्तिकाय 117	52	प्रवचनसार 2 100
35	पचास्तिकाय 33	53	प्रवचनसार 1 23
36	पचास्तिकाय 128	54	प्रवचनसार 1 27
37	पचास्तिकाय 129	55	प्रवचनसार 1 35
38	पचास्तिकाय 130	56	प्रवचनसार 1 51
39	प्रवचनसार 1 54	57	प्रवचनमार 1 22
40	मोक्षपाहुड 4	58	प्रवचनसार 1 23
41	मोक्षपाहुड 5	59	प्रवचनसार 1 20
42	मोक्षपाहुड 7	60	प्रवचनसार 1 53
43	समयसार 14	61	प्रवचनसार 1 60
44	भावपाहुड 64	62	प्रवचनसार 1 59
45	समयसार 11	63	पचास्तिकाय 29
46	समयसार 141	64	प्रवचनसार 1 67
47	समयसार 142	65	प्रवचनसार 1 68
48	प्रवचनसार 1 81	66	प्रवचनसार 2 95

गाथा- क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम	गाथा- क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम
67	समयसार 91	85	पचास्तिकाय 136
68	समयसार 219	86	पचास्तिकाय 137
69	प्रवचनसार 2 59	87	पचास्तिकाय 138
70	समयसार 265	88	पचास्तिकाय 139
71	प्रवचनसार 2 87	89	पचास्तिकाय 140
72	प्रवचनसार 2 59	90	भावपाहुड 76
73	प्रवचनसार 1 42	91	प्रवचनसार 2 65
74	समयसार 102	92	प्रवचनसार 2 66
75	समयसार 126	93	भावपाहुड 77
76	समयसार 130	94	प्रवचनसार 64
77	समयसार 131	95	भावपाहुड 86
78	समयसार 83	96	समयसार 153
79	समयसार 84	97	प्रवचनसार 2 89
80	प्रवचनसार 2 63	98	मोक्षपाहुड 17
81	प्रवचनसार 1 46	99	पचास्तिकाय 167
82	प्रवचनसार 1 69	100	पचास्तिकाय 158
83	पचास्तिकाय 132	101	प्रवचनसार 1 78
84	पचास्तिकाय 135	102	प्रवचनसार 1 13

गाथा- क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम	गाथा- क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम
103	प्रवचनसार 1 11	121	नियमसार 22
104	प्रवचनसार 1 7	122	नियमसार 23
105	प्रवचनसार 1 16	123	नियमसार 24
106	प्रवचनसार 1 15	124	नियमसार 26
107	प्रवचनसार 1 14	125	नियमसार 27
108	प्रवचनसार 1 44	126	नियमसार 28
109	पचास्तिकाय 77	127	पचास्तिकाय 83
110	पचास्तिकाय 110	128	पचास्तिकाय 85
111	पचास्तिकाय 79	129	पचास्तिकाय 86
112	पचास्तिकाय 81	130	पचास्तिकाय 88
113	पचास्तिकाय 82	131	पचास्तिकाय 89
114	प्रवचनसार 2 69	132	नियमसार 30
115	प्रवचनसार 2 71	133	पचास्तिकाय 90
116	प्रवचनसार 2 72	134	प्रवचनसार 2 36
117	प्रवचनसार 2 73	135	पचास्तिकाय 23
118	प्रवचनसार 2 74	136	पचास्तिकाय 26
119	प्रवचनसार 2 75	137	पचास्तिकाय 100
120	नियमसार 21	138	नियमसार 33

गाथा- क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम	गाथा- क्रम	मूल ग्रन्थ गाथा-क्रम
139	पचाम्तिकाय 10	145	पचास्तिकाय 16
140	पचास्तिकाय 8	146	पचास्तिकाय 17
141	पचाम्तिकाय 11	147	पचास्तिकाय 18
142	पचास्तिकाय 12	148	प्रवचनसार 2 1
143	पचाम्तिकाय 13	149	प्रवचनसार 2 2
144	पचास्तिकाय 15		☐



सहायक पुस्तकें एवं कोश

1. समयसार : आचार्य कुन्दकुन्द
(संपादन वलभद्र जैन)
(श्री कुन्दकुन्द भारती, दिल्ली)
2. शिष्यमसार : आचार्य कुन्दकुन्द
(सम्पादक वलभद्र जैन)
(श्री कुन्दकुन्द भारती, दिल्ली)
3. प्रवचनसार : आचार्य कुन्दकुन्द
(सम्पादक—मनोहरलाल जैन)
परमश्रुत प्रभावक मण्डल, अगाम
4. पंचास्तिकाय : आचार्य कुन्दकुन्द
सम्पादक—पद्मलाल वाकलीवाल
परमश्रुत प्रभावक मण्डल, अगाम
5. अष्टपाहुड : सम्पादक प पद्मलाल साहित्याचार्य
(कुन्दकुन्द भारती) (श्रुत मण्डार व ग्रन्थ प्रकाशन समिति
फल्टण, महाराष्ट्र)
6. हेमचन्द्र प्राकृत व्याकरण : व्याख्याता, श्री प्यारचन्दजी महाराज
भाग 1-2 (श्री जैन दिवाकर दिव्य ज्योति कार्यालय,
मेवाडी बाजार, व्यावर)
7. प्राकृत भाषाओं का : डॉ आर पिशल
व्याकरण (विहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् पटना)
8. अभिनव प्राकृत व्याकरण : डॉ नेमिचन्द्र शास्त्री
(तारा पब्लिकेशन, वाराणसी)
9. प्राकृत भाषा एवं साहित्य : डॉ नेमिचन्द्र शास्त्री
का आलोचनात्मक इतिहास : (तारा पब्लिकेशन, वाराणसी)
10. प्राकृतमार्गोपदेशिका : प बेचरदास जीवराज दोशी
(मोतीलाल बनारसीदाम, दिल्ली)
11. संस्कृत निबन्ध-दर्शिका : वामन शिवराम आप्टे
(रामनारायण वेनीमाधव, इलाहाबाद)
12. प्रौढ-रचनानुवाद कौमुदी : डॉ कपिलदेव द्विवेदी
(विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी)
13. पाइअ-सद्-महणवो : प हरगोविन्ददास त्रिकमचन्द सेठ
(प्राकृत ग्रन्थ परिषद्, वाराणसी)
14. संस्कृत हिन्दी-कोश : वामन शिवराम आप्टे
(मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली)
15. Sanskrit-English : M Monier Williams (Munshiram
Dictionary Manoharlal, New Delhi)
16. बृहत् हिन्दी कोश : सम्पादक कालिकाप्रसाद आदि
(ज्ञानमण्डल लिमिटेड, बनारस)

